खण्ड 3
राज्य और समाज : विचारधाराओं का संघर्ष

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 सांप्रदायिकता*

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 मूल अवधारणा

- 12.2.1 कट्टरवाद
- 12.2.2 सांप्रदायिकता
- 12.2.3 धर्मनिरपेक्षता

12.3 कट्टरवाद के पहलू

12.4 सांप्रदायिक विभाजन

- 12.4.1 हालिया सांप्रदायिक दंगे
- 12.4.2 सांप्रदायिक दंगो के कारण

12.5 धर्मनिरपेक्ष के पहलू

- 12.5.1 धर्मनिरपेक्ष विचार
- 12.5.2 गांधी के विचार

12.6 सारांश

12.7 संदर्भ

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- कट्टरवाद का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रांसगिक उदाहरण की मदद से सांप्रदायिकता की व्याख्या कर सकेंगे;
- सांप्रदायिकता के लक्षण जान सकेंगे;
- भारत में धर्मनिरपेक्षता क्या है और यह कैसे काम करती है, स्पष्ट कर सकेंगे;

12.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम कट्टरवाद, सांप्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता की मूल अवधारणाओं को स्पष्ट करेगें। फिर हम प्रत्येक मूल अवधारणा की व्याख्या करते हुए, उस पर विस्तार से विचार करेंगे। सर्वप्रथम हम कट्टरवाद की अपनी पहली अवधारणा लेते हैं, एवं इसका वर्णन करते हैं। फिर हम साम्प्रदायिकता की ओर मुड़ते हैं, और सांप्रदायिक दंगों के कारणों को अंकित करते हैं, और उनके आर्थिक और सामाजिक आयामों की जांच करते हैं। इसके बाद अंतर सामुदायिक गतिशीलता का विश्लेषण करते हैं।

* यह इकाई ई.एस.ओ–15, इकाई 32 से अंगीकृत है।

अंत में, हम धर्मनिरपेक्षता की ओर बढ़ते हैं, जिसे कुछ मायनों में कट्टरवाद और सांप्रदायिकता के लिए एक रामबाण के रूप में देखा जाता हैं। हम धर्मनिरपेक्षता पर कुछ अलग अलग दृष्टिकोणों की जांच करते हैं, जिसमें कि गाँधी जी के दृष्टिकोण शामिल हैं।

12.2 मूल अवधारणाएं

आइए हम पहले अपनी इकाई की बुनियादी अवधारणाओं को सामने रखें।

12.2.1 कट्टरवाद

यह कट्टरवाद हमारी तीन अवधारणाओं में से पहली है और यह विश्वास तथा सिद्धांत के सभी मामलों में एक अध्यात्मिक ग्रंथों (उदाहरण बाइबिल, ग्रंथों, गीता, कुरान) की अचूकता पर बल देती है। विश्वास करने वालों ने इसे एक शाब्दिक ऐतिहासिक रिकॉर्ड के रूप में माना हैं, जिसके परिणाम स्वरूप अनुयायियों द्वारा एक उग्रवादी कदम लिया जाता है जिसकी परिणति कई बार. एक अलग मातृभूमि की इच्छा के रूप में होती है। कई बार, उसे भी शास्त्रों में की गयी भविष्यवाणी के रूप में प्रचारित किया जाता है। इस प्रकार कट्टरवाद एक निश्चित समुदाय को मुख्यधारा से अलग करता है, हालांकि समाज अपनी विभिन्न अंगों (पुलिस, सेना आदि) से कट्टरपंथियों को दबाने या खत्म करने का प्रयास करता है। विशेषकर जब वे कानून के परे काम करना शुरू करते हैं। सांप्रदायिकता को हिंसा और दंगो के विस्फोटक परिणाम के साथ जोड़ा जाता है। चाहे इन सभी विध्वंसक गतिविधियों का कोई भी विशेष उद्देश्य या लक्ष्य नहीं हो (सांप्रदायिक अनुकरण या वर्चस्व के अलावा) हालांकि, कट्टरवाद व्यवस्थित होता है, सभी को स्वयं में समेटने वाला आंदोलन हैं, जिसका लक्ष्य विशेष रूप से धार्मिक प्रतिश्ठापनों के प्रकाश में सामाजिक लक्ष्यों को आगे बढ़ाना होता है। इसकी संचालन रणनीति में शांति एवं युद्ध की भाँति दोनों प्रकार की प्रयोग और गतिविधियाँ शामिल होती हैं।

12.2.2 सांप्रदायिकता

क्लीफोर्ड ग्रेन्ड, एक अमेरिकी मानवविज्ञानी ने (1963 : 105-157) नए राज्यों जैसे अफ्रीका, एवं एशिया में, राजनीति की प्रकृति पर चर्चा करते हुए लिखा है कि जब हम भारत में सांप्रदायिकता बोलते हैं तो हम धर्म की विषमता का उल्लेख करते हैं। जब हम मलाया में बोलते हैं तो हम मुख्य रूप से नस्लीय और कांगो में आदिवासियों के संदर्भ में बात करते हैं। ''यहाँ साम्प्रदायिक और राजनीतिक निष्ठाओं के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध है। इस प्रकार से, जब हम भारत की बात करते हैं तो हम मुख्य रूप से धर्म पर आधारित विरोधों की बात करते हैं। अतः सांप्रदायिकता का उल्लेख सामाजिक परम्पराओं के एक शोषण को राजनीतिक गोलबंदी के माध्यम के रूप में विशेष रूप से किया गया हैं। ऐसा आरोपित समूहों के हितों को दंडित करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार सांप्रदायिकता एक विचारधारा हैं, जिसका प्रयोग एक समुदाय की सामाजिक, पर्यावरणीय, राजनैतिक उम्मीदों को पूरा करने के लिए किया जाता है। इसे अपने अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए प्रस्तावों और कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है। ये सभी सामाजिक परिवर्तन के चरणों में सक्रिय हो जाते हैं। भारत में सांप्रदायिकता औपनिवेशक काल के दौरान उभर कर आयी। सांप्रदायिक राजनीति ने धर्म और परंपरा को अपनी रणनीतियों का आधार बनाया। इतिहास की व्याख्या संघठन के उद्देश्यों के लिए की गई है। सांप्रदायिक संगठनों के पास लोकतंत्र के लिए कोई स्थान नहीं होता। दूसरे, वे नस्लवादी विषमताओं को शामिल कर सकते हैं

और उसे प्रोत्साहित कर सकते हैं। वे समानता को असामान्य मानते हैं और परिवारिक और सामाजिक नियम के रूप में पितृसत्ता का समर्थन करते हैं अतः सांप्रदायिकता हैः

1) एक विश्वास व्यवस्था

2) सामाजिक परिघटना

सांप्रदायिकता एक विश्वास प्रणाली से पैदा होती हैं। जो एक समुदाय के भीतर महान एक जुटता मानकर चलती है परन्तु हमेशा यह सच नहीं हो पाता। अतः हम पाते हैं कि अक्सर अंतर जातीय झगड़े होते हैं। एक अहम बात यह है कि सांप्रदायिकता के नायक इतिहास के बारे में एक विशेष दृष्टिकोण रखते हैं, तथा इस बात का ध्यान रखते है कि एक समुदाय की पहचान एक समान दुखों और लक्ष्यों के रूप में की जाये, समुदाय की खासियत के अभाव पर दूसरे समूदायों के समक्ष जोर दिया जाये इसलिए इसे शाब्दिक तरीके से अपने अधिकारों के लिए लड़ने के लिए तर्कसंगत माना जाता हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया था, भारत में सांप्रदायिकता एक औपनिवेशिक विरासत है, जिसमें शासकों (अंग्रेजों) ने अपने लाभ के लिये विभिन्न समुदायों के बीच धार्मिक विरोधाभासों का इस्तेमाल उन्हें प्रमुखता देकर किया था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वतंत्र भारत के आर्थिक प्रसार ने आर्थिक अवसरों का प्रमुखता से विस्तार किया, लेकिन इतना नहीं जो अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा को दबाने के लिए पर्याप्त हो पाते हैं। विभिन्न समुदायों के बीच नौकरी के बंटवारे को लेकर द्वेशों के छोटे मोटे अवसर पैदा होते हैं। औपनिवेशिक शक्ति से स्वतंत्रता पाने के बाद भयावह सांप्रदायिक तबाही फैली जिसका कारण 1947 में आजादी के दिन देश का दो हिस्सों में हुआ बंटवारा था।

सांप्रदायिकता के लक्षण

- साप्रंदायिकता एक वैचारिक अवधारणा है। यह एक जटिल परिघटना है।
- इसका एक व्यापक आधार हैं, जो अपने अभिव्यक्ति के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं को शामिल करता है।
- यह जनता के बीच प्रतिद्वंदिता, हिंसा और तनाव का कारण है।
- इसका उपयोग उच्च वर्ग के लोगों में अन्य धर्मों और अभिजात वर्ग द्वारा एक उपकरण के रूप में किया जाता हैं, जो निर्धन वर्गों के बीच दरार पैदा करने और शोषण के लिए प्रयोग होता है सांप्रदायिकता केवल अवसरवादी राजनीति है।
- साधारण तौर पर सांप्रदायिकता एक अवसरवादी राजनैतिक दल की किसी इकाई या राजनैतिक दलों द्वारा राजनीतिक और आर्थिक हितों के लिए रची गयी अवधारणा है।
- यह धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र और राष्ट्रीय एकीकरण की जड़ों पर प्रहार करता है और इसके प्रभाव विध्वंसकारी हैं।
- सांप्रदायिक हिंसा की घटनाओं को आतंकवाद की घटनाओं से स्पष्टतः पृथक नहीं किया जा सकता है। सांप्रदायिक हिंसा, ''भीड़ द्वारा की हत्याओं को संदर्भित करती हैं, जबकि आंतकवाद आतंकवादियों के छोटे समुहों द्वारा प्रयोजित हमले होते हैं। मुख्य रूप सें, कट्टरपंथी धार्मिक आंदोलन आतंकवाद के लिए जिम्मेदार है।

12.2.3 धर्म निरपेक्षता

भारत में धर्मनिरपेक्षता के वैचारिक निर्माण को कट्टरवाद और साम्प्रदायिकता से उपजी समस्याओं के समाधान के रूप में अपनाया जाता है। आदर्श रूप में, यह एक ऐसी स्थिति को दर्शाता हैं, जहां जीवन के राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रो से धर्म का भेद स्पष्ट होता है। प्रत्येक धर्म का सम्मान होना चाहिये और निजी तौर पर अभ्यास किया जाना चाहिए। वैचारिक रूप से यह विश्वासों और प्रथाओं की एक प्रणाली नहीं हैं, जिसे किसी भी समुदाय को वोटिग बूथ में लुभाने के लिये राजनीतिक विचारधारा के साथ मिलाया जाये। मौटे तौर पर धर्मनिरपेक्षता धर्म एवं राजनीति को पृथक करती है। इसके अलावा यह उस दृष्टिकोण का समर्थन करता है कि, राज्य द्वारा सभी समुदायों को समान अवसर प्रदान किए जाये। धर्म निरपेक्षतावादियों के लिए सभी धार्मिक विश्वासों को तर्कसंगत दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए, तथा अंत में सामाजिक जीवन को एक समानतावादी तरीके से व्यवहार में लाना चाहिए।

अतः धर्मनिरपेक्षता से तात्पर्य किसी भी धार्मिक शिक्षा के विरोध के विचारों से है। इसे धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया से जोड़ा गया, यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज के बहुत से क्षेत्र धार्मिक प्रतीकों के वर्चस्व से परे किये। यहाँ तक कि धार्मिक संस्थाओं के प्रभुत्व से भी हटाये गये। अंत में पश्चिमी धर्मनिरपेक्षता का विचार, आधुनिक विज्ञान और प्रोटेस्टेटवाद के द्वन्द्व से दक्षिणी एषिया के समाजों में स्थानांतरित कर दिया गया। यह स्थानांतरण समस्याओं से भरा है और किसी भी प्रकार से सुगम प्रक्रिया नहीं है।

बॉक्स 12.1

भारत में विभिन्न धर्म के लोग रहते हैं, केवल इस कारण भारत एक राष्ट्र होने को नकारा नहीं जा सकता। यदि हिन्दुओं का यह मानना है कि भारत में केवल हिन्दुओं को ही रहना चाहिए, तो वे एक सपनों की दुनियां मे रह रहें हैं। हिन्दू, मोहम्मद, पारसी और ईसाई जिन्होने भारत को अपना देश बनाया हैं, वे भी हमारे भारतीय भाई हैं। उन्हें भी अपने हितों के लिए इसमें एकजुट होकर ही रहना होगा। दुनिया के किसी भी हिस्सें में एक राष्ट्रीय और एक धर्म समानार्थी शब्द नहीं हैं। न ही यह भारत में ऐसा कभी हुआ हैं। - एम. के. गांधी, हिन्द स्वराज (1908)

12.3 कट्टरवाद के पहलू

एक अवधारणा के रूप में कट्टरवाद 1910-1915 में पहली बार प्रयोग किया गया था, जब अज्ञात लेखकों ने कट्टरवादी साहित्य के 12 संस्करणों को ''द फंडामेन्टल्स'' के नाम प्रकाशित किया। 1920वें दशक के प्रारम्भ में प्रकाशन मीडिया ने इस शब्द का प्रयोग उत्तर अमेरिका में रूढ़िवादी-प्रोटेस्टेन्ट समूहों के संदर्भ में किया ये समूह बाइबिल के उदारवादी व्याख्याओं से चिंतित थे। इससे सतर्क हो रूढ़िवादियों ने आस्था की कुछ कट्टरताओं पर जोर दिया। उन बुनियादी बातों' वर्जिन मेरी के जन्म, देवत्व, ईसा मसीह जी उठने के और ग्रंथों की अचूकता जैसी आस्थायें सम्मिलित थी। इन बुनियादी बातों के साथ-साथ 1910-1915 में 'द फंडामेंटल्स' नामक पर्चों का प्रकाशन हुआ और इस प्रकार कट्टरवाद की संकल्पना का विशेष प्रयोग शुरू हुआ। इस प्रकार कट्टरता के मौलिक आंदोलन में ग्रंथों की अचूकता या उनके सवर्था सत्य होने को एक आधारभूत मुद्दा और जीवन के मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार किया जाता है। मार्गदर्शक को जीवन में कट्टरपंथियों द्वारा जोड़ना यहाँ

इनकी जरूरत है। कुछ कट्टरपंथी कहते हैं कि शास्त्र की व्याख्या करने की भी आवश्यकता नहीं हैं, क्योंकि इसमें अर्थ स्वयं में स्पष्ट हैं। अक्सर किसी भी प्रकार की असहमति या अमान्यता प्रायः असहिष्णुता समझी जाती है। इस प्रकार एक आंशका है कि कट्टरपंथी संकीर्ण मानसिकता वाले और धर्मांध होते हैं।

टी.एन. मदान (1993) ने इंगित किया है, कि तत्कालीन दुनिया में मौलिकता कट्टरवाद शब्द व्यापक रूप में प्रचलित हुआ है। टी.एन मदान के अनुसार यह विभिन्न प्रकार के मानदंडों, मूल्यों, दृष्टिकोणों को संदर्भित करता है जो या तो कट्टरपंथियों पर पूर्वाग्रह से ग्रसित होते हैं या उनका पूर्णरूपेण बहिष्कार करते हैं। यह शब्द कभी कभी गलत तरीके से सांप्रदायिकता के स्थान पर प्रयोग किया जाता है। वास्तव में कट्टरवादी शब्द एक आवरण बन गया हैं, यानि, दुनिया भर में विभिन्न कट्टरवादी आंदोलन वास्तव में एक समान नहीं हैं, अपितु विभिन्न तरीकों से एक दूसरे से भिन्न हैं। किंतु, वह एक वैचारिक समानता से जुड़े हैं या यूं कहे एक पारिवारिक सादृष्य से जुड़े हैं।

कट्टरवादी आंदोलन एक सामूहिक चरित्र के हैं, वे अकसर करिश्माई नेताओं के नेतृत्व में होते हैं जो आमतौर पर पुरुष होते हैं। इस प्रकार 1979 के ईरानी आंदोलन का नेतृत्व आयातुल्ला खुमैनी ने किया था और सिख कट्टरपंथी विद्रोह संत भिडरांवाले के द्वारा किया गया (मदान ibid)।

कट्टरपंथी एक व्यावहारिक लोग होते हैं, और सभी आंशिक अशुद्धियों (धार्मिक रूप से बोला जाये तो) से जीवन को शुद्ध करने के प्रयास करते है। मौदूदी ने वर्तमान मुस्लिम जीवनशैली को अज्ञानी बताया और भिंडरावाले ने, जो सिख अपनी दाढ़ी काटते हैं, अपने बाल काटतें हैं, और अपने पारंपरिक जीवन का पालन नहीं करते हैं, उन्हें गिरा हुआ बताया। अतः कट्टरवादी आंदोलन केवल धार्मिक विश्वासों और प्रथाओं के बारे में ही नहीं बल्कि जीवन शैली के बारे में प्रतिक्रिया देते हैं।

इस तरह कट्टरपंथी आंदोलन प्रतिक्रियाशील है। अतः इसमें शामिल व्यक्तियों, नेताओं और सभी प्रतिभागियों की प्रतिक्रिया उनकी समझ में जो संकटकारी हो, उस पर होती है। संकट तत्काल उपचार का आहवान करता हैं। मूल कार्यक्रम को वास्तविक पंरपरा की ओर वापसी के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार समकालीन परिष्कृत कट्टरवाद हैं जो वर्तमान की जरूरतों को पूरा करता हैं। इसमें आमतौर पर पंरपरा का एक चयनित पुनरूद्धार शामिल हैं। यह परंपरा का एक अविष्कार भी हो सकता है।

ईरान में खुमैनी ने न्यायविदों के संरक्षण के आधार पर एक इस्लामिक राज्य विकसित किया है। भिंडरावाले ने गुरू जी के उत्तराधिकारियों की बजाय फिर से गुरू गोविंद सिंह के शिक्षाओं पर चयनित जोर दिया, चयनात्मक उत्तराधिकारियों के बजाय खरी चुनौती पर जोर दिया। आध्यात्मिक सत्ता पर जोर देना तथा संस्कृति की आलोचना करना कट्टरवाद के दो पहलू है। तीसरा महत्वपूर्ण तत्व राजनीतिक शक्ति का अनुसरण है।

राजनीतिक शाक्ति का अनुसरण करना कट्टरवाद के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके बिना ये पुनरूत्थान के मामले के रूप में हमारे समक्ष पेश किया जाएगा। इसमें राष्ट्रवाद के सांस्कृतिक और सैद्धान्तिक पहलु के साथ-साथ राजनैतिक पहलू मौजूद हैं। इस प्रकार से पता चलता है कि कट्टरपंथी आंदोलन प्रायः हिंसक होते हैं, और धर्मनिरपेक्षता की विचारधारा को खारिज करते हैं। वे अधिनायकवादी हैं तथा असहमति सहन नहीं करते हैं। हालांकि ये आंदोलन आधुनिक समाज में एक विशेष भूमिका निभाते हैं, जिनको अनदेखा

नहीं किया जा सकता हैं। इस प्रकार एक उद्देश्यपूर्ण बौद्विक विश्लेषण के कट्टरवाद को एक विशिष्ट श्रेणी के रूप में मानना चाहिए। यह न धर्मतंत्र है न ही पिछड़ी सांप्रदायिकता हैं।

12.4 सांप्रदायिक विभाजन

भारत में सांप्रदायिकता की मिथ्या विचारधारा थी, और अभी भी मौजूद हैं, कि भारत में विभिन्न समुदाय अपने प्रमुख पारस्परिक लाभ के लिए सह अस्तित्व में नहीं रह सकते हैं। अल्पसंख्यक में आशंका है कि वे हिन्दू अधीनता के शिकार हो जांएगे और ना एतिहासिक रूप से निर्मित स्थिति और न ही संस्कृति भी सहयोग की अनुमति देगी।

सांप्रदायिकता ने राष्ट्रीय आंदोलन के बाद के चरण के दौरान भारतीय राजनीति में गहरी जड़े जमा ली। उसे औपनिवेशिक शासकों द्वारा प्रोत्साहित किया गया था। यह प्रक्रिया धर्मनिरपेक्षता को दुर्बलता और अपर्याप्तता के एक सिलसिले के रूप में उपनिवेशवाद विरोधी संघर्ष के दौरान कल्पित और प्रचारित किया गया।

इस प्रकार सभी सिद्धांतों में यह धारणा निहित रही हैं कि भारतीय समाज में हिन्दू मुस्लिम के बीच तनाव का बढ़ना समाज में हो रहे परिवर्तनों का स्वाभाविक और अपरिहार्य परिणाम नहीं था। विभाजन तो संघर्ष की परिणति था, जिसे टाला जा सकता था, और इसे टाल जाना चाहिए था। तर्क की इस विचारधारा में आगे कहा गया हैं, कि राष्ट्र निर्माण का अर्थ सांप्रदायिक सांचों को अनिवार्य रूप से विलुप्त करके एक सामान्य पहचान का निर्माण होता हैं जो धर्म, जाति या भाषा के आधार पर विभेदित समूहों के अस्तित्व को कम करता हैं। इस प्रकार सांप्रदायिक शक्तियों को विभाजन के और राजनीतिक अल्पविकसितता के संकेत के रूप में भी देखा जाता है। साम्प्रदायिकता तब उभरती है जब एक जातीय पहचान अर्थात् धार्मिक विश्वासों की एक या दो विशेषताओं को चुनकर इसे भावनात्मक रूप से अधिभारित किया जाता हैं। सांप्रदायिक आंदोलन प्रायः थोड़े समय के लिये होते हैं और युग्म में रहते हैं। जिसमें एक विरोध करने वाला बल या विचारधारा शामिल हो जाती हैं जिसका सामना करना होता है। कट्टरवाद के विपरीत, सांप्रदायिकता केवल युग्मों के रूप में ही अस्तित्व में आ सकती हैं।

इस प्रकार हिन्दू-मुस्लिम दंगे उनकी धार्मिक आशंकाओं और सामाजिक आर्थिक आकांक्षाओं को दर्शाते हैं। कभी कभी ये दंगे मुस्लिम और हिन्दू दुकानदारों के बीच के झगड़े जैसे बहुत मामूली कारणों से शुरू होते हैं (घोष 1981-93-94)

महत्वपूर्ण बात यह है कि ये छोटी-मोटी एकाकी घटना नहीं हैं, बल्कि अक्सर विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक संगठनों के बीच जानबूझकर पैदा किये टकराव होते हैं। आर्वतक टक्कर जहां त्यौहारों पर और विभिन्न धार्मिक अवसरों में हस्तक्षेप करके पैदा किये जाते हैं। ऐसा सांप्रदायिक भावनाओं और कटुता को भड़काने के लिए किया जाता है। घोष के अनुसार (1981), सांप्रदायिक दंगों की आंच अगस्त 1946 में कलकत्ता में पहुँची थी जब मुस्लिम लीग ने ''एक डायरेक्ट एक्शन डे'' का आहवान किया। बम्बई ने भी उससे अगले माह ऐसा किया गया। इस प्रकार स्वंतत्रता हजारों लोगों के षवों पर खड़ी की गयी। गांधी की हत्या के बाद कुछ समय दंगे कम हुए और यह स्थिति मूल रूप से नेहरू के समय में बनी रही। फिर 1964 में नेहरू के निधन के बाद और बिगड़ती हुई सामातिक आर्थिक परिस्थितियों के कारण सांम्प्रदायिक हिंसा को पुननिर्माण हुआ।

12.4.1 हालिया सांप्रदायिक दंगे

1960 के दशक और 1970 के दशक के अंत में अहमदाबाद, बड़ौदा, रांची, जमशेदपुर आदि में बड़े पैमाने पर सांप्रदायिक दंगे हुए थ। रांची जैसे कस्बों में भिवंडी में जहां 1969 में एक शिविर लगाया था, वहाँ भड़के सांप्रदायिक संघर्ष ने दोबारा मजदूर एकता की भविष्यवाणियों और विश्वासों पर काली छाया डाली। यह वामपंथियों के लिए एक झटका था। प्रतिबद्व कम्युनिस्टों द्वारा हथकरधा कार्यकत्ताओं के बीच जमीनी स्तर पर चलाया गया आंदोलन सांप्रदायिक हिंसा की आग पर काबू पाने में असमर्थ रहा।

1969 में ही अहमदाबाद में एक सांप्रदायिक दंगा हुआ था, जिसको भडकाने का कारण पवित्र शास्त्रों और पवित्र गायों का अपमान था। हालांकि यह संदेह था कि ये दंगे राजनीतिक रूप से प्रेरित थे।

इन दंगों ने स्पष्ट संकेत दिया कि धर्म आधारित तनावों और टकरावों के सतही स्तर के कारकों के पीछे विभिन्न राजनीतिक कारक थे। 1980 के दशक के पहले छह वर्षों में एक बार फिर से दंगों का ग्राफ उपर गया। पटेल (1990) ने ये महसूस किया है कि, सांप्रदायिक हिंसा धार्मिक तर्कों व धर्म के द्वारा समर्थित हैं, और उसे लगता है कि जो लोग इसका सहारा ले रहे हैं, वे न तो सच्चे हिन्दू या सच्चे मुसलमान हैं। धर्म शत्रुता नहीं सिखाता। हांलाकि जो कारण अक्सर सांप्रदायिक के हिंसा के लिए दिए जाते हैं, वह आहत धर्म की भावनाओं के कारण हैं। 1984 के भारत सिख विरोधी दंगे, 2002 में गुजरात दंगें और 2013 में मुजफ्फरपुर दंगों का साक्षी है और ये दंगे नाममात्र हैं।

12.4.2 सांप्रदायिक दंगों के कारण

हमारे अनुभाग की हाल के सांप्रदायिक दंगों के संदर्भ में देखें तो अन्य कारणों का पता चलता है। जैसा कि घोष ने (1981) सांप्रदायिक दंगों के होने और जारी रहने के लिये कई तर्क रखे हैं जो इस प्रकार हैं : दंगे एक अल्प विकसित देश में प्रगति का हिस्सा हैं। वर्ग संघर्ष सांप्रदायिक संघर्ष में परिवर्तित हो जाता है जिससे सर्वहारा वर्ग की एक जुटता दुर्बल होती है। और फिर मध्यम और पिछड़े वर्ग ने वष्हत्तर राजनैतिक और आर्थिक शक्ति पाई है और अपनी सत्ता को प्रदर्शित किया। कई बार आर्थिक संघर्ष ने दंगों का रूप ले लिया जैसे कि बिहार शरीफ और भिवाडी में हुआ था।

(ii) चुनावी राजनीति सांप्रदायिक हिंसा की यह उद्देश्य और दिशा निर्धारित करती है जैसे 1986 में दिल्ली में हुआ था।

यह स्पष्टीकरण बाध्यकारी नहीं हो सकते हैं, उन्हें आवश्यक और पर्याप्त नहीं ठहराया जा सकता हैं। आर्थिक कारण अक्सर दंगों के बाद (पहले नहीं) सामने उभरकर आते हैं। फिर से एक विकासशील समाज के आर्थिक कारक ही है जहाँ एक प्रतियोगी का दूसरे से पीछे छूटना भी दंगों का कारण बन सकता है। यही बात घटती हुई राजनैतिक कारण पर लागू होती है। पर्दे के पीछे राजनैतिक हेरफेर का विचार मान्य (valid) नहीं हो सकता हैं।

बोध प्रश्न 1

1) सांप्रदायिक दंगो के तीन कारण बताएं।

   अ) .....

   ब) .....

स) .....

2) रिक्त स्थानों को भरेः-

हिन्दु ..... हाल के दिनों में दंगे ..... कस्बों तक सीमित हो गए हैं।

ऐसे कौन से कारक है जो भारत में सांप्रदायिक विभाजन को दूर कर सकते हैं। कुछ सुझावों में (वर्मा, 1990, 63-65) जो विभिन्न सुझावों को बताते हैं जैसे कि धर्म को राजनीति से अलग किया जाना चाहिए और सांप्रदायिक विचारों को फैलाने के लिए सांप्रदायिक निकायों पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए और फिर प्रैस की स्वतंत्रता साम्प्रदायिक विचारों को भड़काने तक विस्तारित नहीं होना चाहिए।

सांप्रदायिकता की सभी राजनैतिक नेताओं और अग्रणीय नागरिकों द्वारा भर्त्सना की जाने की आवश्यकता है। अल्पसंख्यक समुदाय की आर्थिक स्थिति सुधारने के उपाय किये जाने चाहिए। सबसे ऊपर ऐसे (ethos) पैदा किया जाने चाहिए जो साम्प्रदायिक हिंसा के अंत और संप्रदायों के बीच शांति कराने की ओर बढ़े। समुदाय के नेताओं को अपने समुदायों को स्थिति समझनी चाहिए और तनाव का षमन करना चाहिए।

इस प्रकार सांप्रदायिकता का एक कुरूप पहलू हैं, और वो राष्ट्रीय एकता के विरूद्ध जाता है। इसे धर्म की राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की छड़ी घुमाने वाला नही बनना चाहिए। आइये अब धर्मनिरपेक्षता की ओर बढ़ते हैं।

12.5 धर्मनिरपेक्षता के पहलू

जबकि कट्टरता और सांप्रदायिकता को व्यापक रूप से समस्यापूर्ण और विभाजनकारी माना गया है धर्मनिरपेक्षता की विचारधारा दोनों के लिए शांतिदायक समाधान माना जाता है। यद्यपि धर्मनिरपेक्षता की ऐसी कोई परिभाषा नहीं जिसे विश्व स्तर पर लागू किया जा सके, तथापि इसे सर्वप्रथम राजा को चर्च के प्रभाव से अलग करने के लिये अपनाया गया था। यह एक राजनैतिक आयाम था।

सामाजिक क्षेत्र में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ व्यक्तियों के जीवन से धर्म के दमघोटू प्रभाव को अलग करना था। भारतीय संदर्भ में यह अध्यात्मिक मूल्यों के अस्तित्व की घोषणा करता हैं, जिस पर कई प्रकार के धर्मनिरपेक्षता के दवाब डाले जा सकें। धर्मनिरपेक्षता इसका हल निकालती है। इस प्रकार भारत में धर्मनिरपेक्षता शब्द के कई अर्थ हैं। जैसे मदान (199ः 394-412) के शब्दों में धर्मनिरपेक्षता के ये आयाम हैः-

i) राज्य को धर्म से अलग करना।

ii) राज्य द्वारा सभी समुदायों से समान और निष्पक्ष उपचार।

iii) वस्तुनिष्ठ तर्कसंगतता की भावना से धार्मिक मान्यताओं के करीब पहुंचना।

iv) समुदाय के बावजूद सभी लोगों के लिए न्यायोचित जीवन स्तर सुनिश्चित करना।

12.5.1 धर्मनिरपेक्ष विचार

धर्मनिरपेक्षता के दर्शन के विवेकपूर्ण उपयोग के माध्यम से कट्टरवाद और सांप्रदायिकता पर अंकुश लगाया जा सकता हैं। धर्म निरपेक्षता के माध्यम से कट्टरवाद और सांप्रदायिकता से लड़ने के लिये तीन विचार प्रस्तुत किए जा सकते हैं। वे हैंः-

1) ये सांप्रदायिकता के खिलाफ एक वैचारिक अभियान हैं, जो हर स्तर पर लोगों को सांप्रदायिकता से मुक्त करने के लिए तैयार किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण के पीछे यह तर्क है कि सांप्रदायिकता स्वयं ही नष्ट हो जायेगी यदि सांप्रदायिक विचारधारा को ही हटा दिया जाये।

2) लोकतांत्रिक अधिकारों के नजरिये के साथ-साथ जमीन से जुड़ी राजनीति सांप्रदायिकता के उन्मूलन के लिए एक दूसरा रास्ता है, दृष्टिकोण यह है कि जमीनी स्तर पर एक जागषति होनी चाहिए। दूसरी ओर एक ऐसी नयी गतिविधि की आवश्यकता है जो राजनीतिक रूप से उन्मुख हैं, लेकिन जमीनस्तर की राजनीति नहीं हो। हालांकि समस्या यह है कि जब तक कि इस जमीनी स्तर के दृष्टिकोण में अखिल भारतीय स्तर पर एक जुटता और एकता नहीं हैं इसके सफल होने की संभावना नहीं हो सकती।

3) धर्म कट्टरवाद, सांप्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता से जुड़ा एक प्रमुख मुद्दा है। धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण से हम धर्म की और किस प्रकार बढ़ सकते हैं? सर्वप्रथम हमें किसी भी धर्म को नकारना नहीं चाहिए नहीं उसे झूठ उच्चारित करना चाहिए।

4) हालांकि राजनीति से धर्म के पृथक होने की परिकल्पना नहीं की जा सकती। दूसरे हमें धर्म के सामाजिक आधार में भी धर्मनिरपेक्षता और लोकतांत्रिकता का पता लगाना चाहिए। तीसरी बात यह हैं कि धर्म की विसंगतियों को उजागर किया जाना चाहिए और एक तार्किक उपागम लेना चाहिए।

जैसा कि मदन (1983) बताते हैं, कि भारत को संविधान की प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्ष गंणतंत्र के रूप में परिभाषित किया गया है। भारत में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ मूल रूप से धर्म का उन्मूलन नहीं हैं। लोग धर्म आधारित राजनीतिक दल बनाने के लिए स्वतंत्र हैं।

फिर बहुधर्मी समाज में धर्मनिरपेक्षता क्या हैं, जिसका प्रतिनिधित्व भारत करता है ?

जैसा पहले बताया जा चुका है, धर्मनिरपेक्षता को विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया जा सकता है, हालांकि अब हम कह सकते हैं कि धर्म निरपेक्षता का अर्थ हैं राज्य से धर्म को अलग करना और धर्म को व्यैक्तिक विश्वास और निजी प्रतिबद्वता के क्षेत्र तक सीमित रखना है। इस चरण में यह इंगित करना महत्वपूर्ण है कि यह विवरण किसी भी समाज के बारे में सच नहीं हैं क्योंकि यह पृथककरण वास्तविक होने के बजाय विश्लेषणात्मक है, जैसा कि स्पष्ट है कि एक धर्म विरोधी रूख के साथ कुछ राजनीति तो होती ही हैं। बाकी सब धर्म के ओर स्वाभाविक होते हैं और अन्त में कुछ ऐसे हैं जो इन चरम सीमाओं के बीच धर्मनिरपेक्षता का अनुसरण करते हैं।

स्वतंत्रतापूर्व और बाद के भारत की नीतियों में भारत की धर्मनिरपेक्षता नीति कैसे प्रतिबिंवित होती है? 19 वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में सिद्धांत उदारवादी राष्ट्रवादियों द्वारा उदारवादी बहुलता की विचारधारा प्रचारित की गयी थी। इस उपागम का विश्वास था कि धर्म को नीतियों के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए। इसका उचित क्षेत्र निजी आस्था तक था। इससे धार्मिक भावनाओं और देश के प्रति भावनाएँ दोनों अक्षुण्ण रहेगी। इस सिद्धांत को समझाने के लिए परिष्कृत समझ की आवश्यकता थी, लेकिन व्यापक समाज इसे समझ नहीं सका। इसे इसकी स्पष्ट रूप से दिखने वाली कमियों के कारण धर्म निरपेक्षता राष्ट्रवाद के रूढ़िवादी बहुवाद द्वारा प्रति स्थापित किया गया। इस सिद्धांत को गाँधी जी ने आगे किया। उन्होंने धर्म को राजनैतिक गतिविधि और राष्ट्रीय पहचान के आधार के रूप में आगे बढ़ाया।

12.5.2 गांधी जी के विचार

गांधी का तर्क था कि भावी राष्ट्र हिदू, मुस्लिम और अन्य सभी समुदायों से मिल कर बनना चाहिए। यह विचार लोकप्रिय प्रतीकों को राजनीतिक प्रतीकों में शामिल कर एक राष्ट्रीय पहचान का निर्माण करने के लिये था। यह विचारधारा जो राजनीतिक लामबंदी में सफल रही थी, 1947 के स्वतंत्रता के बाद के युग में इसमें कुछ समस्या आई। वे इस प्रकार हैं:-

i) गांधी जी का यह विचार कि धार्मिक मतभेदों को धार्मिक निष्ठाओं का उपयोग करके संभाला जा सकता है और इस तरह से राष्ट्रीयता को बढ़ावा दिया जा सकता है, गलत सिद्ध हुआ। रूढ़िवादी बहुवाद के विचार ने विभिन्न धार्मिक समुदायों के दरार को कम करने की बजाय बढ़ाया।

ii) इन विचारधाराओं ने समुचे समाज में समृद्ध और शक्तिशाली वर्ग को राष्ट्रीय संघर्ष में खींचा और यह सुनिश्चित किया कि वे स्वंत्रत भारत पर हावी हों।

iii) एक अन्य सिद्धांत (कट्टरपंथी समाजवादी) जिसे कुछ आधार मिला उसका धर्मनिरपेक्ष नीति का सपना जो गरीब जनता के सपने को ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में प्रतिबिंबित करता था। धार्मिक निष्ठाओं को राष्ट्रीय पहचान से परे रखा गया। यह महसूस किया गया कि केवल राष्ट्रीय पहचान राजनीति से जुड़ सके। जो सामाजिक आर्थिक तथ्यों को राष्ट्रवाद की सच्चाई से जोड़े। धर्म राजनैतिक क्षेत्र में प्रयोग करने के लिए नहीं अपितु निजी मामला रहे।

यह रूख धर्म की उदारवादी बहुवादी विचारधारा जैसा दिखता हैं, हांलाकि कट्टरपंथी समाजवादियों ने खुद को गरीबों के रूप में संबोधित किया और धन के सामाजिक पुनर्वितरण का प्रयास किया।

कट्टरपंथी समाजवादी धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद का ये सिद्धांत बीसवीं सदी के दूसरे क्वार्टर के दौरान सामने आया परन्तु यह अधिक समय तक नहीं टिक सका था। इसके गरीबी उन्मुख और धन का पुनर्वितरण समान वितरण उन्मुख होने के बावजूद यह सिद्धांत गाँधीवादी विचारों के चलते विफल रहा। गाँधी की धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद की रूढ़िवादी बहुवादी विचारधारा विभिन्न कारणों से लोकप्रिय हुई:-

i) विभिन्न वर्गों और समुदायों के बीच मजबूत धार्मिक भावना। इसे गाँधी ने राष्ट्रवाद के लिए एक लोकप्रिय आधार के रूप में लामबंद किया।

ii) फिर से दलितों के उत्थान के लिए कामना करते समय इसने सामाजिक और आर्थिक शक्ति पर नियंन्त्रण से धनी वाणिज्यिक वर्गों को वंचित नहीं किया।

बॉक्स 12.2

नेहरू ने 1961 में लिखा था कि धर्मनिरपेक्ष होने का मतलब धर्म का विरोध नहीं था। जो उनके मतानुसार सही नहीं था। सत्य था तो ऐसे राज्य का अस्तित्व, जिसमें जब सभी धर्मों को समान सम्मान दिया जाये और उनके लिए समान अवसर प्रदान किए जाये। उन्होंने यह भी कहा कि यह सामूहिक जीवन और सोच में पूरी तरह परिलक्षित नहीं होता है। (गोपाल, 1980 पृष्ठ 330)

इस सिद्धांत ने एक तीर से दो निशाने साधे। इसने राष्ट्रीयता के लिए बड़े पैमाने पर समर्थन जुटाया और पूंजी और संपत्ति के सिद्धांत का मुद्दा छोड़ दिया। अमीरों ने महसूस किया

कि इस सिद्धांत ने उन पर प्रहार नहीं किया, उसी समय गांधी ने कभी नहीं कहा कि वह अमीरों के लालच के लिये गरीबों के हितों का बलिदान करना चाहते थे। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत में एक ओर रूढ़िवादी बहुवाद का सिद्धांत है और दूसरी और सांप्रदायिक तनाव जो हमें राष्ट्रीय एकीकरण की अंतदृष्टि प्रदान करते हैं। अतः धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद को जो सिद्धांत धर्म या समुदाय आधारित है, वे नीति के लिए सही नहीं हो सकता हैं। हालांकि धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत जो धर्म और राजनीति के बीच की दूरी रखें वे राजनीति के क्षेत्र के लिए सबसे अच्छे हैं। ऐसी धर्मनिरपेक्ष राजनीति अमीर या गरीब को अपनी गतिविधियों के लिए सबसे अच्छा उपयोग कर सकती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जनता को शिक्षित करना धर्मनिरपेक्षता का एक तरीका है। शिक्षित होकर वे सभी मौलिक और सांप्रदायिक रास्तों से बचकर एक सच्चा गणतंत्र राजतंत्र को हासिल करने का प्रयत्न कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) भारतीय संदर्भ में ''धर्मनिरपेक्ष'' शब्द के दो अर्थों का उल्लेख कीजिए।

   अ) .....

   ब) .....

   स) .....

2) धर्म निरपेक्षता पर गाँधी जी के विचार क्या थे ? 7-10 पंक्तियों में उत्तर दें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

12.6 सारांश

इस इकाई में हमने कट्टरवाद, संप्रदायवाद और धर्मनिरपेक्षता की मूल अवधारणाओं को समझाकर शुरू किया। फिर हम सांप्रदायिकता और धर्मनिरपेक्षता की जाँच की ओर मुड़े। सांप्रदायिक दंगो और कुछ अंतर सामुदायिक तथ्यों के कारणों को उजागर किया गया। अंत में धर्मनिरपेक्षता की व्याख्या करते हुए इसके विभिन्न विचारों की जांच की गई और गांधी के धर्म निरपेक्षता संबंधी विचारों को भी प्रस्तुत किया। यह महसूस किया गया कि धर्मनिरपेक्षता अपने सच्चे अर्थों में कट्टरवादियों और सांप्रदायिक प्रवृत्ति का मुकाबला कर सकती है।

12.7 सदंर्भ

Patel, Babubhai, J., 1990. 'The Recent Issues of Communal Tensions—A Remedial Thinking' In Kumar, Ravindra (ed.) 1990 *Problem of Communalism in India.* Mittal: Delhi.

Durkheim, E. 1915. *The Elementary Forms of the Religious Life.* (Trans. J.S. Swain) The Free Press : Glencoe.

Geertz, Clifford (ed), 1963. *Old Societies and the New States, the Quest for Modernity in Asia and Africa.'* Amerid Publishing Co. Pvt. Ltd. : New Delhi.

—, 1963. The Integrative Revolution Primordial Sentiments and Civil Politics in the New States, pp 105-157.

Ghosh, S.K., 1981. *Violence in the Streets : Order and Liberty in Indian Society.* Light and Life Publishers : New Delhi, pp 67-128.

Gluckman, M., 1963. Rituals of Rebellion in South East Africa. *In Order and Rebellion in Tribal Africa.* London : Cohen and West, pp 110-37.

Gopal, S., (ed) 1980. *Jawaharlal Nehru: An Anthology.* Oxford University Press : Delhi.

Madan, T.N., 1983. The Historical Significance of Secularism in India' in Dube S.C., and Basilov V.N. 1983. Secularization in Multireligious Societies: Indo Soviet Perspectives ICSSR : Delhi pp 11-20.

Madan, T.N. 1987. *Non-Renunciation Themes and Interpretations of Indian Coulture.* Oxford University Press : Delhi.

, 1991. 'Introduction' to Madan T.N. (ed.) 1991. *Religion in India.* Oxford University Press : Delhi.

'-, 1991. 'Secularism in its Place pp. 394-412 in *Religion in India* (ed.) Madan, T.N. 1991. Oxford University Press : New Delhi.

, 1993. 'Religious Fundamentalism'. *The Hindu.* 29 Nov. '93.

Moore, S.J., and Frederick, V, 1964. *Christians in India.* Publications Division :, Delhi.

Marglin, Frederique Apffel., 1985. *Wives of the God King : The Rituals of the Devdasis of Puri.* Oxford University Press : Delhi.

Pandey, Raj Bali, 1976. *Hindu Samskaras : Social Religious Study of the Hindu Sacraments.* Motilal Banarsidas : Delhi.

Patel, B.J. 1990. The Recent Issues of Communal Tensions: A Remedial Thinking in Ravindra Kumar (ed.) 1990. *Problem of Communalism in India.* Mittal Publications: Delhi.

Publications Division, 1966. *Muslims in India.* Delhi.

Sangave, V.A., 1980. *Jaina Community.* Popular Perakashan : Bombay.

Saraswati, Baidyanath, 1978. "Sacred Complexes in Indian Cultural Traditions". *In* The Eastern Anthropologist,.* 31(1) : 81-91.

, 1985. Kashi Pilgrimage, The End of an Endless Journey. In Jha Makhan (ed.). *Dimensions of Pilgrimage.* Inter-India Publications : New Delhi.

Singh. Dr. Gopal, 1970. *The Sikhs.* M. Seshachalam and Co. : Madras.

Singhi, N.K., 1991. A Study of Jains in Rajasthan Town in Carrithers, M., and Caroline Humphrey (eds.) *The Assembly of Listeners : Jains in Society.* Cambridge University Press : Cambridge.

Srinivas, M.N., 1970..(1962). *Caste in Modern India and Other Essays.* Asia Publishing House : Bombay.

Verma, Virendra, 1990. Communalism : Remedial Suggestions, in Kumar (ed) Ravindra 1990, *Problem of Communalism in India,* Mittal Publications : Delhi.

12.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) a) आर्थिक कारण

   b) राजनीतिक कारण

   c) समाजशास्त्रीय कारण

2) मुस्लिम, मध्यम आकार

बोध प्रश्न 2

1) a) राज्य को धर्म से अलग करना।

   b) राज्य द्वारा सभी समुदायों के समान और अनुभवजन्य उपचार।

2) गांधी जी ने यह महसूस किया कि भावी राष्ट्र को सभी समुदायों से न केवल हिन्दुओं और मुसलमानों से बल्कि सभी समुदायों से विचार लेना चाहिए। धर्म के प्रतीकों को राजनैतिक मुख्यधारा में लाने का विचार था। हालांकि स्वतंत्र भारत में यह विचारधारा असफल रही और समुदायों के बीच दरार बढ़ने लगी और, अमीर व शाक्तिशाली वर्ग राष्ट्रीय संघर्ष में शामिल हो कर स्वतंत्र भारत पर हावी हो गये।

शब्दावली

1) **सांप्रदायिकता**:- यह एक ऐसी स्थिति हैं, जिसमें धर्म और धार्मिक समुदाय एक दूसरे को शत्रुता और वैमन्स्य के साथ देखते हैं। वे अक्सर खुले संघर्ष में सामने हैं जैसे कि सांप्रदायिक दंगे।

2) **कट्टरवाद**:- यह शब्द आस्था और दर्शन के मामलों में धर्मग्रंथों के अकाट्य रूप से सही होने पर बल देता है। जिससे कई बार यह साम्प्रदायिक दंगों के रूप में खुले संघर्ष को सामने लाता है।

3) **धर्मनिरपेक्षता:-** यह वह मूल सिद्धांत है जो यह बताता है कि धार्मिक विश्वास के सभी मामलों को आर्थिक, राजनीतिक और प्रशासन के अन्य क्षेत्रों में अलग किया जाना चाहिए। ऐसा क**रने में यह आशा** होती है कि एक सामंजस्यपूर्ण और एकीकृत राष्ट्र राज्य का निर्माण हो।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

Engineer, A.A. ed., 1984. *Communal Riots in Post Independent India:* Saangam : Hyderabad.

Withnow, R. 1991. "Understanding Religion and Politics" *Daedalus* Vol. 120 of the Proceeding of the American Academy of Arts and Sciences, Cambridge, MA; U.S.A.

Basilov V.N. and Dube S.C. (eds.) 1983. *Secularization in Multi-Religious Societies: Indo-Soviet Perspectives.* Indian Council of Social Science Research: Delhi.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 13 धर्मनिरपेक्षता*

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 धर्मनिरपेक्षता : अर्थ एवं परिभाषा

13.3 भारतीय संविधान और धर्मनिरपेक्षता

13.4 भारतीय समाज और धर्मनिरपेक्षता

13.5 भारतीय धर्म और धर्मनिरपेक्षता

- 13.5.1 हिन्दू धर्म और धर्मनिरपेक्षता
- 13.5.2 इसाई धर्म और धर्मनिरपेक्षता
- 13.5.3 इस्लाम और धर्मनिरपेक्षता
- 13.5.4 सिख धर्म और धर्मनिरपेक्षता
- 13.5.5 बौद्ध धर्म और धर्मनिरपेक्षता

13.6 धर्मनिरपेक्षता के लिए चुनौतियाँ

- 13.6.1 धर्मनिरपेक्ष विरोधी ताकतें

13.7 सारांश

13.8 संदर्भ

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे :

- धर्मनिरपेक्षता के अर्थ और विचार को समझने में;
- धर्मनिरपेक्षता के सामाजिक संदर्भ और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर चर्चा करने में;
- धर्मनिरपेक्षता की प्रकृति और विषयक्षेत्र की व्याख्या करने में;
- धर्मनिरपेक्षता की समस्याओं को समझने में।

13.1 प्रस्तावना

धर्मनिरपेक्षता का अर्थ क्या है और कैसे यह दिन-प्रतिदिन के जीवन में प्रासंगिक है इसे समझने के लिए यह इकाई धर्मनिरपेक्षता पर केन्द्रित है। समाज विभिन्न संरचनाओं से बना होता है जिसमें जाति, वर्ग, लिंग, जातियता और धर्म इसके कुछ महत्वपूर्ण तत्त्व है। इन सभी तत्वों में सामाजिक सामंजस्य स्थापित किए बिना समाज कार्य नहीं कर सकता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है समाज की सामाजिक संरचना के अंदर विभिन्न जातियाँ, नृजातीय समूह, लिंग और धर्म भी है जहाँ यह सभी उपश्रेणियाँ हस्तक्षेप न करने की सामान्य समझ के द्वारा कार्य करती है। यही धर्मनिरपेक्षता की विस्तृत अवधारणा है जहाँ एक निश्चित धार्मिक समूह दूसरे धार्मिक समूहों के साथ हस्तक्षेप नहीं करता है।

* यह इकाई शंकर नारायण बाघ द्वारा लिखित है।

वर्तमान समाज में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा और इसकी प्रासंगिकता को समझने के लिए यहाँ पर हम विभिन्न वैचारिक मुद्दों और उदाहरणों की चर्चा करेंगे। यह भाग धर्मनिरपेक्षता पर दार्शनिक दृष्टिकोण और समकालीन स्थिति का एक स्पष्ट विस्तार से विश्लेषण के साथ शुरू होता है। सबसे पहले, कुछ धार्मिक सिद्धांतों और गैर-धार्मिक दार्शनिक व्याख्याएँ धर्मनिरपेक्षता के नैतिक दर्शन को रेखांकित या उजागर करेंगे। अगले भाग धर्मनिरपेक्षता की विस्तृत अवधारणा और इसकी समाज में प्रासंगिकता को समझने में आपकी सहायता करेंगे।

13.2 धर्मनिरपेक्षता : अर्थ एवं परिभाषा

'सेक्युलरिज्म' (धर्मनिरपेक्षता) शब्द लैटिन भाषा के 'सेक्युलर' शब्द से उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है 'वर्तमान युग या पीढ़ी'। धर्मनिरपेक्षता सामाजिक प्रगति और तार्किक व्यवहार की व्यापक समझ से जुड़ा हुआ है। इस प्रकार, मानव समाज की प्रगति धर्म-निरपेक्षता की अवधारणा को आधुनिक तार्किक समाज में सामाजिक व्यवहार के स्वरूप के रूप में लायी है। यह नैतिक मतैक्य के क्षेत्र में धर्म के अधिकार को कम करने के लिए है। चर्च के प्रभुत्व से तार्किक सत्ता, जो राज्य है, को क्षेत्रों के हस्तांतरण का वर्णन करने के लिए धर्मनिरपेक्षता एक अवधारणा के रूप में सर्वप्रथम यूरोप में अस्तित्व में आयी। वैधानिक तार्किक सत्ता या राज्य को एक गैर-धार्मिक या तटस्थ सत्ता माना जाता है जो सभी धार्मिक और गैर-धार्मिक समुदायों को निष्पक्ष तरीके से प्रशासित कर सकती है।

धर्मनिरपेक्षता की ऐतिहासिक घटना की पृष्ठभूमि को 17वीं सदी के यूरोप में ढूंढा जा सकता है जहाँ अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए रोमन कैथेलिक चर्च और राज्य के बीच वैमनस्य हुआ था। इससे पहले वहाँ पर 1618 से 1648 के मध्य तीस वर्ष लम्बा युद्ध हुआ था। इस तीस साल लम्बे युद्ध के परिणाम स्वरूप आठ लाख हादसे हुए। इस युद्ध में, मार्टिन लूथर किंग के नेतृत्व में विभिन्न प्रोटेस्टेंट समूहों और कैथोलिक राज्य वाद-विवाद, शोषण और अमानवीयता में शामिल थे। लड़ाई तब प्रारम्भ हुई जब नव निर्वाचित महान रोमन सम्राट, फर्डिनाड II ने धार्मिक समरूपता को अपने शासन पर थोपा जो अपने लोगों को रोमन कैथेलिकवाद के लिए मजबूर करने का कार्य था। दूसरी ओर, अपने अधिकारों के उल्लंघन के कारण उत्तरी प्रोटेस्टेंट राज्य नाराज थे, जो अधिकार उनको ऑग्सबर्ग की शान्ति संधि में प्रदान किये गए थे। फर्डिनाड II के द्वारा ऐसे कार्यों ने उन्हें प्रोटेस्टेंट संघ बनाने से भी प्रतिबंधित कर दिया था। अपने पूर्वज रूडोल्फ II की तुलना में फर्डिनाड II एक धर्मनिष्ठ रोमन कैथेलिक और अपेक्षाकृत असहिष्णु था। वह अपनी कैथोलिक समर्थक नीतियों के लिए जाना जाता था।

यह युद्ध '30 वर्षों का युद्ध' या 'संप्रदायिक युद्ध; के नाम से जाना जाता है जो वेस्टफेलिया की संधि के साथ खत्म हुआ था। यह संधि परस्पर विरोधी पक्षों द्वारा अपने हितों की संतुष्टि के साथ एक समझौता है जिसे झगड़े का निपटारा होने तक की गई व्यवस्था (Modus Vivendi) कहा जाता है। धीरे-धीरे, झगड़े का निपटारा होने तक की यह व्यवस्था राजनीतिक व्यवस्था के सिद्धांत के रूप में विकसित हो गई (हॉब्स, लॉक आदि लेखों को देखें) और राजनीतिक वर्गों के बीच इसका प्रसार हो गया। इस समय पर, धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांत आया जिसने राज्य और चर्च को अलग-अलग कर दिया।

धर्मनिरपेक्षता की समाजशास्त्रीय समझ अधिक सामान्य और व्यापक समझ की हकदार है। धर्मनिरपेक्षता में धर्म, अर्थव्यवस्था, राजनीति, न्याय, स्वास्थ्य, परिवार इत्यादि के ऊपर नियंत्रण की अपनी परम्परागत सत्ता को खो देता है। 1851 में, सकारात्मक दृष्टिकोण के

रूप में प्रगति के एक वैचारिक गठन के तहत धर्मनिरपेक्षता ने एक तर्कसंगत आंदोलन का नेतृत्व किया। पीटर बर्जर, विचार रखते हैं कि धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य उस प्रगति से है जिसमें समाज का एक भाग और संस्कृति धार्मिक संस्थानों के वर्चस्व से दूर हट जाते है।

सामान्यतः, धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य राजनीतिक और सामाजिक दर्शन की एक व्यवस्था से है जो पूजा (उपासना) और धार्मिक विश्वास के सभी स्वरूपों को नकारती है। यूरोप में धर्मनिरपेक्षता की उत्पत्ति 'उस सिद्धान्त को परिभाषित कर रही थी जिसमें धार्मिक मान्यताओं की परवाह किए बिना, वर्तमान जीवन में नैतिकता मनुष्य के कल्याण पर आधारित होनी चाहिए। भारतीय राज्य ने अपनी नीति में परिभाषित किया कि भारत 'धर्मनिरपेक्षता' का तात्पर्य धार्मिक निष्पक्षता बनाये रखना है। महात्मा गाँधी और मौलाना आजाद का धर्मनिरपेक्षता से तात्पर्य सर्वधर्म सद्भावना अर्थात् 'सभी धर्मों के प्रति सद्भावना' है।

धर्मनिरपेक्षता धर्म को राजनीति से अलग करने की पक्षधर है। इस प्रकार, धर्मनिरपेक्षता का अर्थ हमेशा धर्म का दूसरी संस्थाओं से पृथक होना दर्शाता है। व्यापक अर्थ में , यह संरचना के लोकतांत्रीकरण का बड़ा मतलब रखता है जहाँ जाति, वर्ग, लिंग क्षेत्र और नृजातीयता सार्वजनिक क्षेत्र के धरातल पर अपने सम्प्रदायिक मूल्य को कम कर देते हैं।

13.3 भारतीय संविधान और धर्मनिरपेक्षता

स्वतन्त्रता के पश्चात्, भारतीय संविधान भारतीय समाज में धर्मनिरपेक्ष संरचना को बनाए रखने की एकमात्र प्राधिकार बन गया। इसने लिखित संविधान के धर्मनिरपेक्ष ढाँचे के अंतर्गत सरकार के एक लोकतांत्रिक स्वरूप की स्थापना की। भारतीय संवधिान की प्रस्तावना कुछ सिद्धांतों द्वारा निर्देशित है जो समान नागरिकता, समानता, स्वतन्त्रता, भाईचारा और धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों पर जोर देती है। जो इस प्रकार है :

हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय;

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता;

प्रतिश्ठा और अवसर की समानता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में;

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्पित है।

उपरोक्त पक्तियाँ स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि भारत का संविधान धर्मनिरपेक्ष संरचना को ना केवल धार्मिक क्षेत्र में बल्कि कानून के समक्ष भाईचारे और समानता के धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को व्यापक दृष्टिकोण में भी बनाये रखने के लिए प्रतिबद्ध है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15 देश के सभी नागरिकों को समान अधिकार प्रदान करता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15(3) जाति, रंग, धर्म, लिंग आदि के आधार पर भेदभाव के बिना सभी नागरिकों को सार्वजनिक स्थान पर अधिकार प्रदान करके समान अवसर और उपलब्धता का वादा करता है। अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोजगार के क्षेत्र में समान अधिकारों को प्रदान करता है। (बासु, 1982)

धर्म, जाति, समुदाय और लिंग पर बिना आपेक्ष के देश के अंदर सभी नागरिकों के लिए समान कानून है। अनुच्छेद 14 के अनुसार, राज्य के सभी नागरिक कानून के समक्ष बराबर है। अनुच्छेद 15 के अनुसार, राज्य धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के भी आधार पर किसी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं करेगा। किसी भी नागरिक के साथ सार्वजनिक स्थानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों, सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों आदि में प्रवेश और राज्य निधि से पोषित साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग में भेदभाव नहीं होगा (बासु, 1982)।

इस प्रकार, भारतीय संविधान धर्मनिरपेक्षता का प्राथमिक संरक्षक है जो सभी नागरिकों के लिए समान कानूनों को निश्चित करता है और उनके मूल अधिकारों की रक्षा करता है। व्यक्तिगत अधिकार, स्वतन्त्रता, समानता और भाईचारा धर्मनिरपेक्षता के मूलभूत सिद्धांत है। और राज्य के नागरिक होने के नाते सभी का समान अधिकारों, अवसरों के साथ-साथ अपने संवैधानिक अधिकारों और कर्तव्यों की रक्षा के प्रति दायित्व है।

13.4 भारतीय समाज और धर्मनिरपेक्षता

भारतीय समाज एक बहु-सांस्कृतिक समाज का गठन करता है जहाँ जाति, वर्ग, धर्म, नृजातियता और लिंग से संबंधित सामाजिक समूहों की विविध श्रेणी कानून के समक्ष समान नागरिकों की तरह एक साथ आती है। यह विविधता में एकता कहलाती है। सभी धार्मिक और नृजातीय समुदाय बिना किसी दूसरे धार्मिक या नृजातीय समूह के हस्तक्षेप के अपने अनुष्ठानों और सामाजिक प्रथाओं का पालन करते है। सामाजिक अन्तःक्रिया और सामान्य भाईचारे के द्वारा सामाजिक एकीकरण तथा एक दूसरे के धार्मिक विश्वासों और प्रथाओं के प्रति सम्मान भारतीय धर्मनिरपेक्ष संरचना में मुख्य तत्व है।

भारत का धार्मिक बहुलवाद एक अनोखी सामाजिक संरचना रखता है। बहुलवाद एकजुटता की भावना के साथ इसके सार्वभौमिक भाईचारे, प्रेम और शान्ति को बनाए रखता है। आधुनिक समय में, बहुलवाद ज्ञान की वैज्ञानिक समझ पर आधारित सिद्धांतों के एक निकाय की स्थापना के साथ आधुनिक तार्किक व्यवहार के विशाल सिद्धांत/विचारधारा का भाग है। इसी प्रकार, आधुनिक राष्ट्र राज्य भी यह तार्किक वैज्ञानिक समाज को स्थापित करने का प्रयास करते हैं जहाँ धार्मिक क्रूरता, प्रजातीय हिंसा और लिंग भेद चिंता के एक महत्वपूर्ण विषय बन गये हैं। वैश्विक आर्थिक क्रियाओं ने भी एक वैश्विक समाज उत्पन्न कर दिया है जिसे 'वैश्विक गाँव' कहते है। आर्थिक क्रियाएँ तथा व्यापार संबंध वहाँ विकसित होते हैं जहाँ विभिन्न राष्ट्रों, विभिन्न धर्मों, विभिन्न प्रजातियों तथा लिंगों के लोग वैश्विक सांस्कृतिक विनिमय की व्यवस्था में संलग्न रहते है। इन क्रियाओं के माध्यम से समाज विविध धार्मिक गतिविधियों को सहन करने के साथ संवृत व्यवस्था से मुक्त व्यवस्था में परिवर्तित हो गया है।

आजादी के बाद भारत में धर्मनिरपेक्षता की स्थापना को राष्ट्र निर्माण पर उत्तर-औपनिवेशिक बहस के आधार पर जाना जा सकता है। सभी धार्मिक समूहों को एक ही मंच पर लाना और विभाजन के दौरान सामूहिक हिंसा के बाद भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र राज्य के रूप में घोषित करना भारतीय नेताओं के लिए एक बहुत ही तनावपूर्ण परिस्थिति थी। हिन्दू-मुस्लिम संघर्षों और धार्मिक कट्टरवाद के साम्प्रदायिक विचार के कारण देश के हर कोने में हिंसा का जोरदार प्रदर्शन हुआ। इसने मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र में एक मुस्लिम राज्य, जो

पाकिस्तान कहलाया, के निर्माण में मुख्य भूमिका निभाई, दूसरी ओर हिन्दू बाहुल्य क्षेत्र ने धर्मनिरपेक्ष राज्य का गठन किया जिसका नाम भारत (इण्डिया) रखा गया। भारत ने एक आधुनिक राष्ट्र राज्य बनाने के लिए सभी धार्मिक समूहों को एक ही मंच पर लाने के लिए अपने आधाभूत सिद्धांत के रूप में धर्मनिरपेक्षता की आधुनिक पहचान को ग्रहण किया। इसने हिन्दू बाहुल्य प्रांतों के अंदर महत्त सद्भाव और धार्मिक सहिष्णुता की ओर अग्रसर किया तथा सभी धार्मिक समुदायों जैसे हिन्दू, मुस्लिम, इसाई, सिख, जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी व जो लोग धर्म को नहीं मानते उनके मध्य भी आपसी सहयोग स्थापित किया (भार्गव 2005)।

13.4.1 भारतीय धर्मनिरपेक्षता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारत में धर्मनिरपेक्षता की ऐतिहासिक समझ भारतीय पुनर्जागरण की अवधि में निहित है। इसका तात्पर्य धार्मिक विश्वास में कलंक और सामाजिक बुराईयों के विरूद्ध सुधार आंदोलनों के समय से है। राजा राममोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, स्वामी दयानंद सरस्वती आदि जैसे कुछ सामाजिक सुधारकों ने सामाजिक बुराईयों और हिन्दू धर्म में संकीर्ण मानसिकता के विरूद्ध संगठित होकर काम किया। उनके तार्किक विचारों और आधुनिक सोच का समाज में गहरा असर है।

औपनिवेशिक प्रशासन भारत के संपूर्ण समाज में एक वृहत (विशाल) परिवर्तन लेकर आया था। ब्रिटिश प्रशासन के अंदर जातिगत संरचना के सांमती वर्चस्व, धार्मिक घृणा, नारी के दमन आदि पर प्रश्न चिह्न लगाये गये। औपनिवेशिक प्रशासन के अन्तिम चरण के दौरान, भातरीय समाज व्यापार, उद्योगों, शहरी जीवन और आधुनिक शिक्षा (गैर-धार्मिक शिक्षा) की वृद्धि के कारण आधुनिक हो गया जिसने समाज में तार्किकता के बढ़ावे और धर्मनिरपेक्षता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। औपनिवेशिक प्रशासन ने अपनी व्यापार गतिविधियों को क्षेत्रीय और धार्मिक सीमाओं से आगे विस्तृत भी किया जिसने धर्मनिरपेक्ष समझ के लिए एक वातावरण तैयार किया। अखबारों, पत्रिकाओं, वाद-विवादों और नागरिक समाज ने समानता, सम्मान (गौरव), व्यक्तिगत अधिकारों तथा स्वतन्त्रता की समाज के सभी भागों के लिए माँग की और विभिन्न स्तरों पर सार्वजनिक विमर्श का हिस्सा बना।

स्वतंत्रता के बाद, शैक्षणिक संस्थाओं, नागरिक समाज, गैर सरकारी संगठनों (NGOs) और बहुत सी निजी अभिकरणों ने भारत में धर्मनिरपेक्षता को स्थापित करने के प्रयत्न किये। समाज परम्परागत संवृत व्यवस्था से मुक्त व्यवस्था में परिवर्तित हो गया जहाँ सार्वजनिक क्षेत्र में कोई भी भाग ले सकता है (गुप्ता : 2000)। श्रम बाजार परम्परागत बंधुआ श्रम से स्वतंत्र अनौपचारिक श्रम में परिवर्तित हो गया जहाँ ग्रामीण कृषक श्रमशक्ति शहरी क्षेत्रों की ओर जाने लगी (ब्रेमनः 1996)। अनौपचारिक क्षेत्र में श्रम गतिशीलता ने विभिन्न संस्कृतियों, जातियों और धर्मों की अन्तर्क्रिया के द्वारा सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन के बड़े क्षेत्र को प्रभावित किया है।

13.4.2 धर्मनिरपेक्षता के भीतर संघर्ष

व्यवस्था में पूर्णता प्राप्त करने के लिए व्यवस्था के अंदर संघर्ष एक सतत् प्रक्रिया है। वर्तमान परिस्थिति में भारतीय धर्मनिरपेक्ष संरचना बढ़ते हुए धार्मिक कट्टरवाद और धर्मनिरपेक्षता के समक्ष चुनौतियों के अर्थ में अधिक जटिल है। समकालीन भारत शासक वर्ग अधिपत्य और राजनीतिक अभिजन के द्वारा धार्मिक कट्टरवाद की पुर्नव्याख्या के कारण

विभिन्न चुनौतियों को अनुभव कर रहा है, जहाँ भारतीय मध्यम वर्ग इसके राजनीतिक फायदों के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है (शर्मा 2016)।

धर्म अपने राजनीतिक अधिपत्य और प्रतीकात्मक पूँजी के लिए भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, उदाहरण के तौर पर, भारत के उत्तरी भाग में दक्षिण पंथी (Right Wings) उत्तरीपंथी राजनीति ने खास तौर से 1992 में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ (RSS) के द्वारा बाबरी मस्जिद विध्वंस मामले में हिंदू कट्टरपंथी समूह का नेतृत्व किया जो भारतीय जनता पार्टी (BJP) का राजनीतिक आधिपत्य था। ठीक इसी प्रकार, भारत के दूसरे भागों में, समकालीन राजनीति ने सत्ता को बनाए रखने के लिए धर्म को आधुनिक राजनीति के एक शक्तिशाली हथियार के रूप में पुनः गढ़ दिया है। इस प्रकार की राजनीति बहुत से हिंसक परिणामों जैसे दंगों, अत्याचारों, सामूहिक हत्याओं आदि की ओर अग्रसर करती है (शर्मा 2016)।

दूसरी ओर, धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक दल भी अपने राजनीतिक फायदे के लिए इस प्रकार के धार्मिक कट्टरवाद में फंस जाते है। इस प्रकार, एक मजबूत धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक दल हुए बिना, भारतीय समाज की धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक संरचना अपनी धर्मनिरपेक्ष संरचना को बनाए रखने के लिए बहुत सी चुनौतियों का सामना करती है। सेन (2005) ने भारतीय राजनीति में पहचान के विषय की विविधता की आलोचना की है। उन्होंने भारतीय राजनीतिक नेताओं और सक्रियावादी बौद्धिक समूहों का धर्म विशेष के प्रति पक्षपात पर भी जोर दिया जो धर्मनिरपेक्षता के सही अर्थों को शिथिल करता है। सेन धर्मनिरपेक्षता पर भारतीय बौद्धिक विमर्श के प्रति बहुत आलोचनात्मक है जो धर्मनिरपेक्षता को प्राप्त करने के सर्वोत्तम तरीके के रूप में आधुनिकता को उजागर करता है। यह विचार पुष्ट करता है कि आधुनिकता के माध्यम से परम्परागत धार्मिक कट्टरतावाद दूर हो जायेगा। नंदी (1998), हालांकि दावा करते हैं कि धर्मनिरपेक्षता आधुनिकता का ना तो एक अनिवार्य और ना ही निहित भाग है।

विद्वानों का दूसरा समूह इस बात पर प्रकाश डालता है कि समकालीन आधुनिक राजनीति में धार्मिक राष्ट्रवाद अल्पसंख्यक समूहों के लिए खतरा पैदा करने के माध्यम से अपने धर्मनिरपेक्ष आधार को खो रहा है। (इक्तिदार और सरकार : 2013)। शर्मा (2016) दावा करते हैं कि दक्षिणपंथी (Right wing) राजनीतिक ताकतों द्वारा की गई सम्प्रदायिक राजनीति ने भारतीय धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक स्थान को नुकसान पहुँचाया है। इस प्रकार, धर्म चुनावी राजनीति का राजनीतिक हथियार बन गया है जहाँ धार्मिक कट्टरवाद के प्रतिस्थापन के माध्यम से आधुनिक राज्य ने अपनी धर्मनिरपेक्ष संरचना को खो दिया है।

जाति, वर्ग, लिंग और धार्मिक क्रूरता के आंतरिक विभेदीकरण के संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता का विस्तृत विश्लेषण अर्थात् वर्चस्व और सामाजिक संस्तरण विभिन्न समुदायों के मध्य एक धर्मनिरपेक्ष संरचना की स्थापना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस मामले में संकट तब आता है जब शासक समूह या राजनीतिक अभिजन दुराचार करता है और न्याय व धर्मनिरपेक्ष पहचान देने में विफल रहता है (गुडवर्थी व मन्नाथिकैरेन, 2014)

नन्दा (2007) तर्क देते हैं कि सार्वजनिक क्षेत्र का 'धर्मकरण' यहाँ तक कि सबसे उन्नत और पुराने लोकतांत्रिक देश जैसे अमेरिका और विकासशील व सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश जैसे भारत में भी धर्मनिरपेक्ष मंच प्रदान करने में विफल हो गया है। दोनों ही देश प्रथाओं और सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन के संदर्भ में एक दूसरे से बहुत अलग है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता

और नागरिक समतावाद अमेरिकी सभ्यता के धार्मिक विश्वासों और सांस्कृतिक जीवन में गहराई से निहित है। सभ्यता ही एक प्रबुद्ध समूह है जो दुनिया भर में अपनी उन्नति के लिए जाना जाता है। यहाँ तक कि अमेरिका, जो अपने इतिहास में बिना सामंतवाद के एक उन्नत देश है, प्रजातिवाद के क्षेत्र में धर्मनिरपेक्षता प्रदान करने में संकट का सामना करता है। वहाँ पर सामाजिक स्तर पर काले और गोरे का विभेदीकरण है हालांकि कानून इसके विरूद्ध है।

भारत, दुनिया को सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश जाति, सामाजिक वर्गीकरण और औपनिवेशिक सामंतवाद को अपने बोझ है। देश के विभिन्न भागों में परम्परागत जाति आधारित सामाजिक संरचना में स्वामी सेवक संबंध आज भी विद्यमान है। इस संदर्भ में दोनों देश व्यवहारिक जीवन में एक चुनौती का सामना करते है जबकि संविधान धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत की सुरक्षा का वादा करता है। अमेरिका में रिपब्लिक पार्टी ईसाईयों को प्राथमिकता देती है, दूसरी ओर भारत में भारतीय जनता पार्टी हिन्दूओं को महत्ता देती है।

बोध प्रश्न I

1) धर्मनिरपेक्षता के अर्थ और परिभाषा को स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय धर्मनिरपेक्षता की ऐतिहासिक परिदृश्य में चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 भारतीय धर्म और धर्मनिरपेक्षता

यह पहले ही उल्लेख किया है कि भारत एक बहुधार्मिक देश है जहाँ विभिन्न प्रकार के धार्मिक समूह एक साथ रहते हैं। 81 प्रतिशत जनसंख्या के साथ हिन्दू धर्म सबसे अधिक आबादी वाले धार्मिक समूहों में से एक है। अपनी 13 प्रतिशत आबादी के साथ मुस्लिम दूसरे सबसे बड़े धार्मिक समूह के रूप में अपना स्थान लेते हैं। इसके बाद सिख, ईसाई, बौद्ध पूरे भारत में फैली एक बड़ी आबादी है।

विभिन्न धर्मों की अपनी स्वयं की धार्मिक विचारधारा (सिद्धांत) विश्वास व्यवस्था और अनुष्ठान प्रथाएँ हैं। इन सभी धर्मों का धर्मनिरपेक्षता और भाईचारे के लिए अपना दर्शन है। ये धर्मनिरपेक्ष दर्शन धर्म और सामाजिक प्रथाओं की विविधता के अंदर एक संगठित व्यवस्था बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

13.5.1 हिन्दू धर्म और धर्मनिरपेक्षता

हिन्दू धर्म एक ऐसा धर्म है जो जीवन जीने का एक पद्धति होने का दावा करता है जो हिन्दू पवित्र विचारों और आध्यात्मिक सिद्धांतों में विश्वास करता है। यह धर्म समाज में सामान्य भाइचारे और शान्ति को बनाए रखने के लिए कुछ नैतिक दर्शन रखता है। हिन्दू धर्म में अन्य धर्मों की तरह समान्य भाईचारे और मानवता के धर्मनिरपेक्ष सिद्धांत शान्ति, सहिष्णुता और धर्मनिरपेक्ष मूल्यों के बारे में सार्वभौमिक तार्किक समझ में प्रदर्शित होते है। परन्तु कुछ सिद्धांत है जो दूसरे धर्मों के प्रति सम्मानजनक और गरिमापूर्ण रवैया बनाए रखने की सलाह देते है। हिन्दू धर्म की पवित्र पुस्तक 'भगवत गीता' सार्वभौमिक भाईचारे पर जोर देती है जो विश्वास करती है कि सभी मनुष्य और प्राणी भगवान द्वारा सृजन किए गए है और भगवान के समक्ष सभी बराबर है।

हिन्दू धर्म का आधुनिकीकरण 19वीं और 20वीं सदी के दौरान राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी जैसे कुछ प्रमुख नेताओं के नेतृत्व में हुआ। इन नेताओं के दार्शनिक विचार उनकी आधुनिक तार्किक समझ और वैज्ञानिक व्याख्या के कारण बाद की अवधि में अधिक महत्वपूर्ण हो गए थे। राजा राममोहन राय हिन्दू पुनर्जागरण के लिए जाने जाते हैं, उन्होंने सामाजिक सामंजस्य और मानवता की बात की है। स्वामी विवेकानंद विश्वास करते थे कि हिन्दू धर्म एक विस्तृत अवधारणा है जो अपने अंदर सभी धर्मों को समाहित करती है। महात्मा गाँधी का दूसरे धर्मों के प्रति सहिष्णुता का विचार, दूसरों की आस्था और विश्वास को जानने और सम्मान देने के लिए दूसरी धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन पर जोर देना उनका धर्मनिरपेक्षता को बढ़ाने के लिए सबसे अच्छा तरीका था।

13.5.2 ईसाई धर्म और धर्मनिरपेक्षता

जैसा कि पहले ही चर्चा की जा चुकी है कि प्रत्येक धर्म अपनी धार्मिक विचारधारा में अपने धर्मनिरपेक्ष सिद्धांत रखता है। ईसाईयों की सामाजिक व्यवस्था और यीशु की शिक्षा सार्वभौमिक भाइचारें पर आधारित है। मानव समाज के बारे में यीशु के आधारभूत सिद्धांत शान्ति, भाईचारा और प्रसन्नता बनाए रखने पर आधारित है। बाइबिल ईसाईयों की पवित्र पुस्तक है। यह ईसाईयों के विश्वासों, आदर्शों और व्यवहारों के मूलभूत सिद्धांत, सार्वभौमिक भाईचारे, प्यार और शान्ति के सिद्धान्त को बताती है। परमात्मा के समक्ष सभी बराबर है क्योंकि सभी परमात्मा की संताने है।

13.5.3 इस्लाम और धर्मनिरपेक्षता

अन्य धर्मों की तरह इस्लाम भी धार्मिक विचारधारा पर आधारित है। मुस्लिम विश्वास करते हैं कि कुरान अल्लाह का सच्चा शब्द है। वे विश्वास करते है कि कुरान मोहम्मद पैगंबर के दूत का माध्यम है जो मानव समाज के बारे में यथार्थता और ज्ञान पर आधारित है। इस्लाम का मतलब है खुदा की इच्छा को मानना। मुस्लिम धर्म किसी भी कठिन परिस्थिति में खुदा के आगे प्रार्थना करने में विश्वास करता है। शान्ति स्थापित करने के लिए दूसरों के साथ किसी भी संघर्ष के बिना खुदा से प्रार्थना करना एक सरल तरीका है। इस्लाम कहता है कि इस बात की चिंता ना करें कि दूसरे क्या कर रहे हैं, दूसरे धर्मों के हस्तक्षेप के बिना जितना ज्यादा से ज्यादा संभव हो सके खुदा से प्रार्थना करें। दूसरे धर्मों के हस्तक्षेप के बना बिना शान्ति और प्रार्थना के इस्लामिक विचार इस्लामिक सिद्धांतों का एक धर्मनिरपेक्ष स्वरूप है।

इस्लाम स्वाधीन मानव तरजीह के बारे में भी जोर देता है। यह तार्किकता और वैज्ञानिक समझ को महत्व प्रदान करता है। इस्लामी धर्मशास्त्र (कलाम) और दर्शन (फलसफा)

मुस्लिम विचारकों द्वारा विकसित की गई सीखने की दो परम्पराएँ है। ये वो विचारक थे जो एक तरफ इस्लाम धर्म के सिद्धातों के तर्कसंगत स्पष्टीकरण और प्रतिरक्षा (मतकल्लिमुन) के साथ जुड़े हुए थे तथा दूसरी ओर वे जो प्राचीन विज्ञान (फलसीफफा) की खोज में लगे हुए थे। इस प्रकार, इस्लामी लेखक और दार्शनिक इस्लामी विचारों को तर्कसंगत बनाने की प्रक्रिया में है। यह तार्किकता और वैज्ञानिक समझ धर्मनिरपेक्षता का आधारभूत संकेत है।

13.5.4 सिख धर्म और धर्मनिरपेक्षता

दूसरे धर्मों की तरह सिख धर्म भी लोगों के बीच प्रेम, शान्ति और सामाजिक सामंजस्य स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सिख गुरू नानक के उपदेशों का पालन करते है जो सिख धर्म के संस्थापक थे। गुरू नानक ने कहा है, ''मैं ना हिन्दू हूँ और ना ही मुस्लिम हूँ, मैं तो भगवान का अनुयायी हूँ', जो वास्तव में एक परमात्मा में अपने विश्वास को दिखाते हैं। गुरू नानक अपने उपदेशों में सार्वभौमिक भाईचारे और शान्ति के लिए संदेश प्रसारित करते है जहाँ वह कहते हैं कि आदमी और आदमी तथा आदमी और औरत में कोई भेद नहीं है, सभी एक समान है। इस प्रकार गुरू नानक और सिख धर्म एक धर्मनिरपेक्ष पहचान और सार्वभौमिक भाईचारे को प्रदर्शित करते है।

सिख धर्म का प्रकृति से ही धर्मनिरपेक्ष है क्योंकि यह संकीर्ण वैचारिक आध्यात्मिक गतिविधियों को नकारता है। सिख धर्म की उत्पत्ति विभिन्न धर्मों में अनुष्ठान गतिविधियों के लिए आलोचना से हुई है। यह मजदूर वर्ग के मध्य अपनी साधारण और धर्मनिरपेक्ष प्रकृति के कारण गतिशील हो गया। यह विश्वास करता है कि परमात्मा सर्वशक्तिमान है और केवल एक ही परमात्मा है। इस प्रकार, सिख धर्म विश्वास करता है कि परमात्मा सर्वव्यापी है और सभी धर्मों के लोग एक समान है।

13.5.5 बौद्ध धर्म और धर्मनिरपेक्षता

बौद्ध दर्शन निस्संदेह आधुनिक लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता में एक योगदान है। आधुनिक सिद्धांतों में आत्म-त्याग (और इच्छारहित जीवन) के द्वारा सार्वभौमिक प्रसन्नता की अवधारणा अग्रणी विचार है। इस प्रकार, बौद्ध धर्म को सबसे युवा और आधुनिक धार्मिक विचारधारा से युक्त माना जाता है। मानव पीड़ा के कारणों के बारे में बुद्ध के विचार धर्मनिरपेक्षता की व्यापक समझ बहुत गहरे तरीके से देते है, जो कुछ प्राप्त करने के लिए इच्छारहित स्वभाव के साथ जुड़े हुए है। इसका तात्पर्य है कि आपको दूसरे धर्म को नुकसान पहुँचाने की इच्छा नहीं है। इस प्रकार, यह बौद्ध धर्म का दूसरे धर्मों के सम्मान और भाईचारा बनाए रखने का उत्कष्ट दार्शनिक विचार है।

13.6 धर्मनिरपेक्षता के लिए चुनौतियाँ

धर्मनिरपेक्षता की उपरोक्त चर्चा धर्मनिरपेक्षता पर विभिन्न व्याख्याओं और विद्वत्तापूर्ण लेखों को आकर्षित करती है। धर्मनिरपेक्षता पर बहुत से सैद्धांतिक के साथ साथ आनुभाविक अध ययन भी है जो हमें धर्मनिरपेक्षता की स्थापना के लिए चुनौतियों और बाधाओं के बारे में स्पष्ट समझ देते है। इन बाधाओं में वर्तमान समय में धर्म सबसे विवादित श्रेणी है। राजनीतिक और आर्थिक फायदे के लिए धर्म का राजनीतिकरण धर्मनिरपेक्ष विचारधारा के लिए सबसे बड़ी बाधा है जिसने धार्मिक कट्टरवाद और सम्प्रदायिक गतिविधियों को एक नए अंदाज में प्रस्तुत किया है। धर्म के नाम पर अपने साम्प्रदायिक विचारों के साथ अक्सर

हिन्दू और मुस्लिम हिंसात्मक गतिविधियों में शामिल होते है। अन्य धर्मों के प्रति कार्यवाही (हिंसात्मक और गैर-हिंसात्मक दोनों) के औचित्य का मूल सिद्धांत राजनीतिक लाभ के लिए एक कार्यात्मक आवश्यकता बन गया है।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता के सामने बड़ी चुनौती यह है कि राजनीतिक और धर्म हमारी राजनीतिक व्यवस्था के एक मुख्य क्षेत्र में आमने-सामने आ गए है जिससे साम्प्रदायिक राजनीति होती है। इस प्रकार, राजनीति को धर्म से स्वतंत्र रखे बिना धर्मनिरपेक्ष विचारधारा खुद को नहीं बनाए रख सकती है। बढ़ता सम्प्रदायवाद और संप्रदायिक हिंसा के साथ धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों पर रूकावट और पारस्परिक धार्मिक आदर्शों का पुनरूत्थानवाद राज्य नीतियों और वोट-बैंक की राजनीति के माध्यम से एक-दूसरे को सुदृढ़ करने के लिए प्रवृत्त है।

भारत एक बहु-सांस्कृतिक और बहु-भाषाई मिश्रित समाज है जहाँ पर सांस्कृतिक के साथ-साथ धार्मिक विविधता भी बहुत अधिक है। यहाँ पर बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक के मध्य निरंतर संघर्ष है जिसमें धर्मनिरपेक्षता रचनात्मक तरीके में एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मानवाधिकारों के उल्लंघन, अल्पसंख्यकों के अधिकारों जैसी संभावना के द्वारा नागरिक समाज, गैर-सरकारी संगठन तथा सार्वजनिक संस्थान अपना प्रयास करते है। परन्तु विपक्षी विचारों की विभिन्न धाराएँ इसके लिए बाधा बन जाती है।

पिछले कुछ दशकों से संप्रदायिक हिंसा धर्मनिरपेक्षता के लिए एक बहुत ही विध्वंसक ताकत बन गयी है जहाँ देश के बहुत से प्रमुख नेताओं ने अपने जीवन का बलिदान दिया है। जैसे कि पहले भी चर्चा की जा चुकी है कि विभाजन के दौरान बहुत से लोगों ने अपना जीवन और संपत्ति को खो दिया था। 1984 में सिख समुदाय का कत्लेआम दूसरा अमानवीय कार्य है जिसने भारत की पूर्व प्रधानमंत्री, इंदिरा गाँधी की हत्या के बाद हजारों सिक्खों की जान ले ली थी। 2000 में गोधरा हिन्दू और मुस्लिम दंगा हुआ जिससे गुजरात में बहुत से लोगों ने अपना जीवन और संपत्ति खो दी। उड़ीसा में 2008 में कंधमाल दंगों में भी हिंसा और हत्याओं के समान परिणाम हुए।

भारतीय धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक राज्य, जहाँ विभिन्न धार्मिक लोग धर्म, जाति, वर्ग, लिंग तथा प्रजाति के आधार पर प्रतिबंध के बिना अपने अधिकारों और जीवन की स्वतंत्रता का उपयोग करते हैं इसके लिए ये धार्मिक कट्टरता और साम्प्रदायिक हिंसा चिंता के बढ़ते कारण है। भारतीय समाज में गैर-धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों का मूल इसकी संस्कृति और धार्मिक गतिविधियाँ है। नंदा (2000) ने दर्शाया है कि कैसे भारतीय धर्मनिरपेक्ष संरचना में धर्मनिरपेक्षहीन संस्कृति और बहुसंख्यकवाद दृष्टिकोण एक महत्वपूर्ण नकारात्मक भूमिका निभाते हैं। ठीक इसी प्रकार से, अमेरिका में, धर्मनिरपेक्ष संरचना के अंदर अलोकतांत्रिक गतिविधियों का समान तरीका उसका हिस्सा है। धार्मिक बहुसंख्यक दृष्टिकोण के संदर्भ में भारत और अमेरिका दोनों देश धर्मनिरपेक्षता की अपनी अद्भुत संरचना रखते है। उदाहरण के तौर पर, भारत में, राम मंदिर राज्य नीति और वोट-बैंक राजनीति का एक अहम भाग है। ठीक इसी तरह से, अमेरिका में, धर्मनिरपेक्ष संरचना कैथोलिक बहुसंख्यक दृष्टिकोण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

भारतीय धर्मनिरपेक्षता धार्मिक प्रतीकों के साथ हिन्दू पंथ और धार्मिक क्रियाओं की अपनी समृद्ध परम्परा को दर्शाती है। यह अपने प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व के रूप में बौद्ध धर्म चक्र के प्रतीक के माध्यम से 'सर्व धर्म समभाव' के विचार का अनुसरण करती है। संवैधानिक रूप

से भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है जो अपने सभी नागरिकों को समान अधिकार और अवसर प्रदान करता है। परन्तु राजनीतिक और सामाजिक रूप से सभी धार्मिक समूहों और जाति-वर्ग समुदायों को संगठित करने के संदर्भ में यह विभिन्न चुनौतियों का सामना करता है जो अक्सर राजनीतिक रूप से प्रेरित दंगों और साम्प्रदायिक हिंसा के लिए जिम्मेदार है।

बोध प्रश्न II

1) भारतीय धर्मों और धर्मनिरपेक्षता पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) धर्मनिरपेक्षता के लिए चुनौतियों की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

13.7 सारांश

आजादी के बाद से, भारत ने एक उदार दृष्टिकोण अपनाया है जहाँ सभी धार्मिक समुदायों को उनके अपने धार्मिक विश्वासों और प्रथाओं का अनुसरण करने की स्वतंत्रता है। संप्रदायिक तनावों को सुलझाने और अपने उदार दृष्टिकोण के द्वारा शान्ति स्थापित करने में शासक वर्ग ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नागरिक समाजों और प्रशासनिक संगठनों ने सामुदायिक सामंजस्य बनाए रखने में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भारतीय धर्मनिरपेक्ष राजनीति ने एक धर्मनिरपेक्ष समाज के पुनर्गठन के लिए पूरक समर्थन दिया है।

13.8 संदर्भ

Basu, Durga Das. (1982). *Introduction to the Constitution of India*. Prentice Hall of India.

Bhargava, Rajeev (ed). (1998). "*Secularism and its Critics*. New Delhi: Oxford University Press.

Nanda, Meera. (2007). "Secularism without secularisation: Reflections on God and politics in US and India." *Economic and Political Weekly* 39-46.

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

1) 'सेक्युलरज्म' (धर्मनिरपेक्षता) शब्द लैटिन भाषा के 'सेक्युलर' शब्द से उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है 'वर्तमान युग या पीढ़ी'। चर्च के प्रभुत्व से तार्किक सत्ता है, को क्षेत्रों के हस्तांतरण का वर्णन करने के लिए धर्मनिरपेक्षता सर्वप्रथम यूरोप में अस्तित्व में आयी। धर्मनिरपेक्षता की समाजशास्त्रीय समझ अधिक सामान्य और व्यापक समझ से उभर कर आयी है। धर्मनिरपेक्षता में, धर्म, अर्थव्यवस्था, राजनीति, न्याय, स्वास्थ्य, परिवार इत्यादि के ऊपर नियंत्रण की अपनी परम्परागत सत्ता को खो देता है। पीटर बर्जर विचार रखते हैं कि धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य उस प्रगति से है जिसमें समाज का एक भाग और संस्कृति संस्थाओं के धार्मिक वर्चस्व को दूर हटा देते हैं। भारतीय राज्य ने अपनी नीति में परिभाषित किया कि भारत 'धर्मनिरपेक्षता' को बनाये रखेगा जिसका तात्पर्य धार्मिक तटस्थता है। महात्मा गाँधी और मौलाना आजाद ने सर्वधर्म सद्भावना अर्थात् 'सभी धर्मों के प्रति सद्भावना' की हिमायत की है। धर्मनिरपेक्षता धर्म को राजनीति से अलग करने की पक्षधर है। इस प्रकार, धर्मनिरपेक्षता का अर्थ हमेशा ध र्म का दूसरी संस्थाओं से पृथक होना दर्शाता है।

2) भारत में धर्मनिरपेक्षता की ऐतिहासिक समझ भारतीय पुनर्जागरण की अवधि में निहित है। राजा राममोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, स्वामी दयानंद सरस्वती आदि कुछ सुधारात्मक नेताओं ने सामाजिक बुराईयों और हिन्दू धर्म में संकीर्ण मानसिकता के विरूद्ध संगठित होकर काम किया। औपनिवेशिक प्रशासन के अन्तिम चरण के दौरान, भारतीय समाज बुर्जआ वर्ग की सम्पत्ति, व्यापार, उद्योगों, शहरी जीवन और आधुनिक शिक्षा (गैर-धार्मिक शिक्षा) की वृद्धि के कारण आधुनिक हो गया जिसने समाज को तार्किक बनाने और धर्मनिरपेक्षता की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अखबारों, पत्रिकाओं, वाद-विवाद और नागरिक समाज द्वारा समानता, गौरव, व्यक्तिगत अधि ाकारों तथा स्वतंत्रता की माँग विभिन्न स्तरों पर सार्वजनिक विमर्श की हिस्सा बन गई थी। स्वतन्त्रता के बाद, शैक्षणिक संस्थाओं, नागरिक समाज, गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) और बहुत सी निजी संस्थाओं ने भारत में धर्मनिरपेक्षता को स्थापित करने का प्रयत्न किया। समाज परम्परागत बंद व्यवस्था से खुली व्यवस्था में परिवर्तित हो गया जहाँ सार्वजनिक क्षेत्र में कोई भी भाग ले सकता है। श्रम बाजार परम्परागत बंधुआ श्रम से स्वतंत्र अनौपचारिक श्रम में परिवर्तित हो गया जहाँ ग्रामीण कृषक श्रम शक्ति शहरी क्षेत्रों की ओर जाने लगी।

बोध प्रश्न II

1) भारत एक बहु-धार्मिक देश है जहाँ विभिन्न प्रकार के धार्मिक समूह एक साथ रहते है। 81 प्रतिशत जनसंख्या के साथ हिन्दू धर्म सबसे अधिक आबादी वाले धार्मिक समूहों में से एक बन जाता है। अपनी 13 प्रतिशत आबादी के साथ मुस्लिम धर्म दूसरे सबसे बड़े धार्मिक समूह के रूप में अपना स्थान लेता है। इसके बाद सिख, ईसाई, बौद्ध भारतीय आबादी के संदर्भ में महत्वपूर्ण स्थान रखते है। यह धर्मनिरपेक्षता ही है जिसके कारण सभी धर्म एक साथ जुड़े हुए है।

   प्रत्येक धर्म की अपनी स्वयं की धार्मिक विचारधारा (सिद्धांत), विश्वास व्यवस्था और अनुष्ठान प्रथाएँ है। इन सभी धर्मों का धर्मनिरपेक्षता और भाईचारे के लिए अपना दर्शन

है। ये धर्मनिरपेक्ष दर्शन धर्म और सामाजिक प्रथाओं की विविधता के अंदर एक संगठित व्यवस्था बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है।

2) धर्मनिरपेक्षता पर बहुत से सैद्धांतिक के साथ-साथ आनुभविक अध्ययन भी है जो हमें धर्मनिरपेक्षता की स्थापना के लिए चुनौतियों और बाधाओं के बारे में स्पष्ट समझ देते है। वर्तमान समय में इन बाधाओं में धर्म सबसे विवादित श्रेणी है। राजनीतिक और आर्थिक फायदे के लिए धर्म का राजनीतिकरण धर्मनिरपेक्ष विचारधारा के लिए सबसे बड़ी बाधा है जिसने धार्मिक कट्टरवाद और साम्प्रदायिक गतिविधियों को एक नए अंदाज में प्रस्तुत किया है। भारतीय धर्मनिरपेक्षता सबसे बड़ी इस चुनौती का सामना करती है कि राजनीति और धर्म हमारी राजनीतिक व्यवस्था के मुख्य क्षेत्र में आमने-सामने आ गए है जिससे साम्प्रदायिक राजनीति होती है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

Basu, Durga Das. (1982). *Introduction to the Constitution of India*. Prentice Hall of India.

Bhargava, Rajeev (ed). (1998). *Secularism and its Critics*. New Delhi: Oxford University Press.

Nanda, Meera. (2007). "Secularism without secularisation: Reflections on God and politics in US and India." *Economic and Political Weekly* 39-46.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 14 राष्ट्रवाद*

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 राष्ट्र और राष्ट्रवाद को समझना

14.2.1 नृजातीयता और राष्ट्र

14.2.2 राष्ट्र की पहचान के विविध सिद्धांत

14.2.3 राष्ट्रवाद के संक्रमण की अवधि

14.3 भारतीय उप-महाद्वीप में राष्ट्रवाद का आधार

14.3.1 न्याय के लिए सार्वभौमिक संघर्ष के रूप में राष्ट्रवाद

14.3.2 एक बुराई के रूप में राष्ट्रवाद

14.3.3 अंतरों के सामान्यीकरण के लिए एक परियोजना के रूप में राष्ट्रवाद

14.3.4 भारतीयों को विरासत में मिली स्वदेशी समानता के उत्पाद के रूप में राष्ट्रवाद

14.3.5 समानता की आलोचना

14.3.6 राज्य के केन्द्रित और राज्य मुक्त राष्ट्रवाद

14.4 भारतीय राष्ट्रवाद के धर्मनिरपेक्ष पहलू और विरोधाभास

14.5 विविध पूरकताओं के साथ सह अस्तित्व

14.6 सारांश

14.7 संदर्भ

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप सक्षम होंगे :

- राष्ट्र और राष्ट्रीयता की समझ विकसित करने में;
- भारतीय उप-महाद्वीप में राष्ट्रवाद के आधारों की व्याख्या करने में;
- भारतीय राष्ट्रवाद के धार्मिक पहलूओं और इसमें निहित विरोधाभासों की व्याख्या करने में;
- भारतीय राष्ट्रवाद में विविध पूरकताओं के साथ सह-अस्तित्व की गतिशीलता को स्पष्ट करने में।

14.1 प्रस्तावना

भारत में राष्ट्र और राष्ट्रवाद की अवधारणाएँ सामाजिक और राजनीतिक बहस का हिस्सा रही हैं। आरम्भ में यह इकाई आपको स्पष्ट, राष्ट्रवाद और नृजातीयता की अवधारणा से अवगत करायेगी और फिर राष्ट्र की पहचान के विविध सिद्धांतों और राजनीतिक वास्तविकता के रूप में राष्ट्रवाद के संक्रमण की अवधि का वर्णन करेगी। यह भारतीय उप-महाद्वीप में

* यह इकाई प्रो. देबल सिंहरॉय के द्वारा लिखी गई है।

राष्ट्रवाद के आधारों पर प्रकाश डालती है और गाँधी जी की राष्ट्रवाद की अवधारणा के लिए सार्वभौमिक संघर्ष के रूप में, टैगोर के राष्ट्रवाद के प्रति दृष्टिकोण को एक बुराई के रूप में स्पट करती है और राष्ट्रवाद को भारतीयों को विरासत में मिली स्वदेशी समानताओं के उत्पाद के रूप में भी दर्शाती है और दृष्टिकोण की समानता की आलोचना भी प्रदान करती है। यह इकाई अंतरो के सामान्यीकरण के लिए एक परियोजना के रूप में राष्ट्रवाद और राज्य केन्द्रित व राज्य मुक्त राष्ट्रवाद के पहलूओं, भारतीय राष्ट्रवाद के धर्मनिरपेक्ष पहलूओं व विरोधाभासों और भारतीय राष्ट्रवाद में विविध पूरकताओं के साथ सह-अस्तित्व की वास्तविकता पर एक बहस प्रस्तुत करती है।

14.2 राष्ट्र और राष्ट्रवाद को समझना

14.2.1 नृजातीयता और राष्ट्र

नृजातीयता की सीमाएँ अक्सर नृजातीयता और राष्ट्र के साथ अतिव्याप्त हो जाती है। जब नृजातीयता शब्द की व्याख्या ग्रीक (यूनानी) शब्द 'इथनो' (नृजाति) के द्वारा होती है जो इस तरह से साथ रहने और कार्य करने वाले लोगों को संदर्भित करता है जो एक जैसे लोगों या एक राष्ट्र के रूप में हो सकते हैं तब कई बार नृजातीयता राष्ट्र को धारणा में बदल जाती है। हालाँकि राष्ट्र नृजातीयता से बड़ा है। जब भी राष्ट्र को नृजातीय समूह के द्वारा समझा जाये, तो इसको निश्चित क्षेत्र से जुड़े हुए एक राजनीतिक रूप से गतिशील स्वयं जागरूक नृजातीय समूह के रूप में समझा जाये। यह स्वायत्तता हासिल करने या राजनीतिक इकाई के संरक्षण के लिए एक राजनीतिक इकाई, जिसमें यह नृजातीय समूह प्रमुख व्यापक राजनीतिक शक्ति है, बनाने के लक्ष्य के साथ संगठित होता है (स्टोन, जे. व प्रिया, बी. 2007:1457, जेनकिंस, 2007:1475)। तथ्य यह दर्शाते हैं कि नृजातीय समूह की क्षमता ही एक राष्ट्र बनती है।

जबकि स्मिथ (1986) के लिए एक सामूहिक नाम, वंश परम्परा की एक सामान्य पौराणिक कथा, एक सांझा इतिहास, एक विशिष्ट साझा संस्कृति, एक विशिष्ट क्षेत्र के साथ एक समिति और एकता की एक भावना नृजातीयता की महत्वपूर्ण विशेषताएँ है और ओमान (1997) के लिए क्षेत्र के अलावा ये सभी विशेषताएँ नृजातीयता का हिस्सा है। जब पैतृक/काल्पनिक या अप्रवासी संघ के कारण एक नृजातीय समूह अपने आप की एक क्षेत्र के साथ पहचान करता है और उसको अपनी मातृभूमि के रूप में अपनाता है और अपने 'बाहरीपन' को 'आंतरिक' में रूपांतरित कर लेता है तब वह एक राष्ट्र बन जाता है (ओमान 1997:36, 1990:163-82)।

नृजातीयता और राष्ट्र के बीच संबंध न केवल अतिव्यापी हो सकता है, बल्कि अनुक्रमिक भी हो सकता है। ओमान (1997) के अनुसार, जब एक नृजातीय समूह एक क्षेत्र के ऊपर नैतिक दावा प्राप्त कर लेता है तब यह राष्ट्र बन जाता है और जब एक राष्ट्र अपनी मातृभूमि में राजनीतिक अधिकार को सुरक्षित कर लेता है तब यह एक राज्य बन जाता है। इस प्रकार, राष्ट्र राज्य के निर्माण से पहले आता है। विजय, औपनिवेशीकरण, अप्रवास और नृजातीय समूह का एक मूल देश, क्षेत्र या राष्ट्र अर्थात् मातृभूमि से विस्थापन के कारण एक राष्ट्र की नृजातीयता में रूपांतरित होने की उल्टी प्रक्रिया भी है। उनके अनुसार एक राष्ट्र का नृजातीयकरण तब होता है जब इसके पास राज्य निर्माण के लिए संसाधन नहीं होते है अर्थात् ऐसी मातृभूमि जो अपने पर राजनीतिक अधिकार रखती है (ओमन 1997: 36)।

'राष्ट्र' शब्द अपनी उत्पत्ति लैटिन शब्द 'नसकि' (Nasci) से प्राप्त की है जिसका तात्पर्य है 'पैदा होना' और इसका अर्थ है 'लोगों का एक समूह जो समान जगह पर पैदा हुआ है'। मध्य युग के अंत के यूरोपियन विश्वविद्यालयों में ''नेशनस्'' वो छात्र थे जो एक समान क्षेत्र या देश से आते थे, जबकि उन्नीसवीं सदी के फ्रांसिसी उग्र लेखकों के लिए नेशनस् (Nations) किसी दिए गए देश के लोग है। हालांकि अंग्रेजी और दूसरी भाषाओं में प्रचलित उपयोग में, ''राष्ट्र'' (Nation) या तो एक राज्य या इसके निवासियों का पर्यायवाची समझा जाता है या फिर एक सामान्य एकता द्वारा बंधे एक मानव समूह समूह को दर्शाता है (रेस्टोव, डी.)।

हालाँकि राष्ट्र एक सामान्य एकता से अधिक है; यह देश और इसके निवासियों के लिए भावना, क्रिया, प्यार और त्याग के लिए एकता है, यह एक सामूहिक पहचान होने व बनने के लिए एकता है; यह इसके साथ-साथ दूसरों के विरूद्ध एकता के लिए आग्रह के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार, राष्ट्र की पहचान को उजागर करने के लिए विभिन्न सिद्धांत विकसित हुए है।

14.2.2 राष्ट्र की पहचान के विविध सिद्धांत

जे.एस.मिल (1861) के लिए राष्ट्र मानव जाति का एक हिस्सा है जो अन्य लोगों की तुलना में अधिक स्वेच्छा से एक दूसरे के साथ सहयोग करने के लिए सामान्य सहानुभूतियों द्वारा आपस में संगठित है और अपने आप के समान सरकार के अधीन होने की इच्छा संजोते है (मिल 1861/1958:16 cf रेस्टोव)। अर्नेस्ट रेनन (1882/1992) के अनुसार ''एक राष्ट्र अपनों द्वारा किये गये बलिदानों की भावना और जिन्हें वो अभी भी स्वयं करने की चाह रखते हैं, के द्वारा निर्मित एक महान एकता है।'' यह नैतिक विवेक और आध्यात्मिक सिद्धांत यांत्रिक रूप से निर्मित नहीं है (रेनन, 1882/1992)।

राष्ट्र के आदर्शों की सबसे प्रभावशाली अभिव्यक्तियों में से एक एंडरसन (1983) द्वारा दी गयी है जब वह राष्ट्र का 'एक काल्पनिक समुदाय' की तरह वर्णन करता है। यह काल्पनिक है क्योंकि सबसे छोटे राष्ट्र के सदस्य भी कभी भी अपने ज्यादातर साथी सदस्यों को नहीं जान पायेंगे.... फिर भी प्रत्येक सदस्य के मस्तिष्क में अपने संप्रदाय की छवि है। यह सीमित रूप से काल्पनिक है क्योंकि सबसे बड़े राष्ट्र की भी, सीमाएँ है जिसके आगे दूसरे राष्ट्रों का अस्तित्व है। कोई भी राष्ट्र मानव जाति के साथ खुद को निकटस्थ होने की कल्पना नहीं करता है। अन्ततः, यह भाईचारा ही है जो इसे संभव बनाता है, पिछली दो शताब्दियों में, बहुत से लाखों लोगों के लिए, मारने को इच्छा नहीं, बल्कि वे इस सीमित कल्पना के लिए मरने को तैयार है (बेनडिक्ट, ए 1983 :57)

ई.एच.कॉर (1939) के लिए राष्ट्र सामान्यता, घनिष्ट संपर्कों और भावनाओं के अधिकार पर बनता है और एक मानव समूह के रूप में जो विशेष रूप से इसके अधिकार में है :

a) एक सामान्य सरकार का विचार चाहे वर्तमान या अतीत में एक वास्तविकता के रूप में या भविष्य की आकांक्षा के रूप में।

b) कुछ विशेषताएँ (जैसे भाषा) राष्ट्र को दूसरे राष्ट्र और गैर-राष्ट्रीय समूहों से स्पष्ट रूप से अलग करती है।

c) कुछ हद तक सामान्य भावना या व्यक्तिगत सदस्यों के दिमाग में राष्ट्र की तस्वीर के साथ जुड़ा होगा

d) एक निश्चित आकार और सदस्यों के बीच संपर्क की निकटता

e) एक स्पष्ट निश्चित क्षेत्र (ई.एच.कॉर 1939 : 7)

राष्ट्रवाद अपने वर्तमान रूप में हालाँकि 17वीं शताब्दी में पश्चिमी दुनिया में पैदा हुआ है परन्तु बाद में अपने वर्तमान स्वरूप में दुनिया के दूसरे भागों में चला गया है। जबकि इस प्रकार की गतिशीलता को पश्चिमी विशेषज्ञों के एक वर्ग द्वारा पश्चिमी संस्कृति का बाकी दुनिया में आयात और आरोपण (थोपने) के रूप में देखा गया है जो राष्ट्र राज्य के गठन और आजादी के लिए मार्गदर्शक है। इसे बहुत से भारतीय विचारकों और विद्वानों द्वारा धरती पर एक बुराई के रूप में भी और न्याय के लिए एक सार्वभौमिक संघर्ष के रूप में भी देख गया है।

राष्ट्रवाद उच्च संस्कृति के आरोपण के रूप में :

गेल्नर (1983) के लिए राष्ट्रवाद के आदर्शों को प्राप्त करने की प्रक्रिया के लिए आवश्यक है ''एक उच्च संस्कृति का इस समाज पर सामान्य आरोपण जहाँ पर पहले की निम्न संस्कृति (और) ..... हस्तचालित (Manual) रूप में प्रतिस्थापित, कणीकरण (बिखरे हुए) व्यक्तियों के साथ अस्पष्ट, अवैक्तिक समाज की स्थापना, इस तरह की एक साझा संस्कृति द्वारा सभी के ऊपर एक साथ, स्थानीय समूहों के पिछले जटिल ढाँचे के स्थान पर, स्वयं सूक्ष्म समूहों द्वारा स्थानीय और विशेष स्वभाव रूप से लोक संस्कृति द्वारा निरंतर पुनरूत्पादित है'' (1983:57)

एरिक होब्सबौम (1990) इस बात पर जोर देते हैं कि राष्ट्रवाद प्रादेशिक राज्य से संबंधित, ऊपर (दबाब) से अनिवार्य रूप से निर्मित है और एक देश के सामाजिक समूहों और क्षेत्रों के मध्य राष्ट्रीय चेतना असमान रूप से विकसित होती है। उनके लिए, राष्ट्रीय आंदोलन तीन चरणों से गुजर चुके है। पहला चरण विशुद्ध रूप से सांस्कृतिक, साहित्यिक व लोककथत्मक था और इसका कोई विशेष राजनीतिक या राष्ट्रीय प्रभाव नहीं था। दूसरे चरण में राष्ट्रीय विचार के अग्रदूतों और उग्रवादियों का एक निकाय और इस विचार के लिए राजनीतिक अभियान का उदय हुआ। तीसरा चरण तब शुरू हुआ जब राष्ट्रवादी कार्यक्रमों ने बड़े पैमाने पर समर्थन प्राप्त किया। उनके लिए राष्ट्रीय आंदोलनों के कालक्रम में दूसरे चरण से तीसरे चरण में संक्रमण प्रत्यक्ष रूप से एक महत्वपूर्ण था कभी-कभी ..... यह राष्ट्रीय राज्य के निर्माण से पहले होता है; इस निर्माण के परिणामस्वरूप, शायद बहुत बार यह बाद में होता है। हालाँकि, होब्सबौम तीसरी दुनिया के देशों में राष्ट्रवाद के निर्माण के मुद्दे पर बहुत आलोचनात्मक था। उसके लिए तीसरी दुनिया में, राष्ट्र राज्य के गठन के बाद भी राष्ट्रवाद आकार नहीं लेता है (होब्सबौम : 1990)

14.2.3 राष्ट्रवाद के संक्रमण की अवधि

पिछले कुछ वर्षों में राष्ट्रवाद ने सामग्री और संचालन के संदर्भ में राष्ट्रवाद की एक विविध कार्यवाही को अपनाया है। पश्चिमी विचारकों ने प्रगतिशील और प्रतिक्रियावादी, सौम्य और अहितकारी, पश्चिमी और पूर्वी, नागरिक और सांस्कृतिक, उदार और अनुदार आदि के मध्य अंतर किया है (स्पेंसर, पी. और बुलमन, एच. 1998:255-57)। आमतौर पर जोर राष्ट्रवाद के नागरिक तत्वों अर्थात् ऐतिहासिक क्षेत्र, कानूनी राजनीतिक समुदाय, सदस्यों की कानूनी-राजनीतिक समानता और राष्ट्र के मानक पश्चिमी मॉडल पर आधारित सामान्य नागरिक संस्कृति और विचारधारा पर दिया गया है। हालाँकि 'सभी राष्ट्रवादों को दोमुखी पाया जाता है, आगे और पीछे दोनों, स्वस्थ (गुणकारी) और रोगी (दूषित) दोनों रूप

में देखा जाता है। शुरुआत से ही इसकी अनुवांशिकता में प्रगति और प्रतिगमन अंकित है' (नैरन् 1997:347-8, इगनटेफ, op.cit., cf. स्मिथ, 1995:99)। स्पेंसर और वुलमन तर्क देते हैं कि परिस्थितियों के निर्माण और पुनर्निर्माण के लिए राष्ट्रवाद में हमेशा 'बाहरी' और 'अन्य' व्यक्तियों का अस्तित्व होगा जिससे राष्ट्रवाद के माने हुए 'अच्छे' स्वरूप 'बुरे' में बदल सकते है (स्पेंसर और वुलमन 1998 :256)। हम और अन्य की भावना ने भी युग्मग (जोड़े) का स्वरूप ले लिया है। समकालीन दुनिया में बहुत स्थानों पर ये युग्मग असली प्रतीत होते है; सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को राष्ट्रवाद के नागरिक स्वरूप के बजाय राजनीतिक विचारधारा के रूप में विशेषाधिकार प्रदान करने की प्रवृत्ति उभरी है।

बोध प्रश्न 1

1) राष्ट्रवाद से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) नृजातीयता क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

14.3 भारतीय उप-महाद्वीप में राष्ट्रवाद का आधार

तीसरी दुनिया के विद्वानों के एक बड़े भाग द्वारा व्यापक रूप से यह बताया गया है कि राष्ट्रवाद पश्चिम की आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के ढाँचे के अंदर विकसित हुआ एक पश्चिमी पूर्वाग्रह है जो राष्ट्रवाद के पश्चिमी स्वरूप को प्रगति के सार्वभौमिक भाग के रूप में मंजूरी देता है। राष्ट्रवाद ने तीसरी दुनिया में आधार इसलिए नहीं पाया कि उसने पश्चिमी उदार परम्पराओं को अपनाया है बल्कि उग्र साम्राज्यवादी-विरोधी कदम की वजह से पाया है (एकांत 2006:170)। इस प्रकार भारतीय स्वतंत्रता, कवियों और दार्शनिकों ने भारत के राष्ट्रवाद का विशिष्ट दृष्टिकोण दिया है।

14.3.1 न्याय के लिए सार्वभौमिक संघर्ष के रूप में राष्ट्रवाद

गाँधी जी ने राष्ट्रवाद को न्याय और समानता के लिए मानवता के सार्वभौमिक संघर्ष के एक भाग के रूप में परिभाषित किया है। वह सशस्त्र राष्ट्रवाद और राष्ट्रवाद के नाम पर किसी के भी खिलाफ घृणा के विरूद्ध थे। उनके शब्दों में : हालाँकि, मेरा राष्ट्रवाद के प्रति प्रेम

या राष्ट्रवाद का मेरा विचार यह है कि मेरा देश आजाद हो सके, अगर जरूरत हो तो पूरा देश प्राण दे सकता है, ताकि मानव जाति जीवित रह सके, वहाँ प्रजातीय घृणा के लिए कोई जगह नहीं हैं। इसे हमारा राष्ट्रवाद रहने दिया जाये (गाँधी, 1947:171)। 1925 में उन्होंने यंग इण्डिया में लिखा था : यह राष्ट्रवाद नहीं है यह बुराई है, ... संकीर्णता, स्वार्थपरता, विशिष्टता जो आधुनिक राष्ट्रों का शाप है वो बुराई है। भारतीय राष्ट्रवाद एक अलग रास्ते पर अटक गया है। व्यापक रूपसे मानवता की भलाई और सेवा के लिए यह स्वयं को व्यवस्थित करना चाहता है या पूर्ण आत्म-अभिव्यक्ति को खोजना चाहता है (गाँधी 1925:18)।

14.3.2 एक बुराई के रूप में राष्ट्रवाद

टैगोर (1950) दुनिया के बढ़ते विखण्डन और राष्ट्रवाद के नाम पर आर्थिक हितों और राजनीतिक शक्ति के लिए बढ़ती हुई लालसा से परेशान थे। उनके लिएः एक राष्ट्र, लोगों के राजनीतिक और आर्थिक संघ (संगठन) के संदर्भ में, एक यांत्रिक उद्देश्य के लिए आयोजित किया जाता है। यह अपने आप में एक लक्ष्य है। यह आत्मरक्षा के लिए है। यह केवल शक्ति का दूसरा पहलू है, ना कि मानव आदर्शों का .....। राष्ट्र, शक्ति और समृद्धि के अपने सभी विरोधाभासों (आडम्बरों), अपने झंडे और स्तुति गीतों, चर्चों में अपनी धर्मद्रोही (तिरस्कारी) प्रार्थनाओं, देश-भक्तिपूर्ण डींग मारने वाले अपने दिखाबटी साहित्य के साथ, इस तथ्य को नहीं छिपा सकता कि राष्ट्र ही एक राष्ट्र के लिए सबसे बड़ी बुराई है (टैगोर, 1950:5-18)।

वह फिर कहते हैंः

आदमी, भगवान की सबसे खूबसूरत रचना, युद्ध करने और पैसा कमाने वाली कठपुलियों, उनके हास्यापद ढंग में तंत्र की दयनीय पूर्णता के रूप में बड़ी संख्या में राष्ट्रीय कारखाने से बाहर आया है.....। यह एक संगठित शक्ति के रूप में संपूर्ण लोगों का पहलू है। राष्ट्रवाद एक बहुत बड़ा संकट है (टैगोर, 1950 : 26, 66)।

गाँधी की तरह, टैगोर भी एक देशभक्त और मानवतावादी थे। वह शक्ति की निरंकुशता और शक्ति के उथले मकसद से स्वतंत्रता के कैद होने (बंद होने) के बारे में परेशान थे। वह मानवता की मुक्ति के लिए थे जैसा राष्ट्र पर गाँधी के दृष्टिकोण में परिलक्षित होता है।

14.3.3 अंतरों के सामान्यीकरण के लिए एक परियोजना के रूप में राष्ट्रवाद

राष्ट्रवाद के बदलते प्रक्षेपवक्र (वक्ररेखा) को रेखांकित करते हुए, पार्थ चटर्जी विश्लेषण करते है कि यद्यपि '1950 और 1960 के दशक में, यह तीसरी दुनिया में औपनिवेशिक विरोधी संघर्ष की एक विशेषता थी, 1970 के दशक तक यह एक दूसरे को मारने की नस्लीय राजनीति का एक मामला बन गया था, राष्ट्रवाद को अज्ञानता के अंधकार, तात्विक, मौलिक (आदिम) प्रकृति के अप्रत्याशित बल के रूप में बनाना सभ्य जीवन के व्यवस्थित रूप को खतरे में डालना है।' उनके लिए औपनिवेशिक शक्ति से संघर्ष करते हुए राष्ट्रवाद भाषा, धर्म, जाति और वर्ग का भेद किए बिना उदासीनता का एक मामला सार्वभौमिक न्यायिक संसाधनों पर आधारित अनिवार्य रूप से सांस्कृतिक ''सामान्यीकरण'' परियोजना था। उत्तर-औपनिवेशिक आधुनिक उदार-लोकतांत्रिक राज्य शासन करने हेतू अपनी वैधता प्राप्त करने के लिए इन मूर्त अंतरों के प्रति उदासीनता भी दिखाता है। परियोजना को सामान्य करने

के लिए, 'शक्ति के आधुनिक प्रशासन की सार्वभौमिकता की सीमा' दिखाने के लिए यह अधीनस्थ समूह के असंख्य विभाजित प्रतिरोधों को पैदा करता है' (चटर्जी, 1994 : 4-13)।

14.3.4 भारतीयों को विरासत में मिली स्वदेशी समानता के उत्पाद के रूप में राष्ट्रवाद

बाद के भारत में विरासत में मिली सामान्य विशेषताओं के संदर्भ में भारतीय राष्ट्रवाद की पृष्ठभूमि को पुनर्परिभाषित करने के लिए विशेष रूप से दक्षिणपंथी राजनीतिक विचारकों द्वारा मजबूत दावा किया गया है। सावरकर (1923) ने विरासत में मिली सामान्य प्रजाति, भूमि, इतिहास, भाषा, संस्कृति और सामान्य 'अन्यों' के दावे पर भारतीय राष्ट्रवाद की जड़ों का पता लगाया। सावरकर ने कहा है कि हिन्दुस्तान 'एक राष्ट्र और एक प्रजाति- एक समान पैतृकभूमि के और इसीलिए एक समान खून' पर आधारित है। उनके लिए हिन्दू एक है क्योंकि वे हिन्दू संस्कृति की एक समान सभ्यता के मालिक है और सभ्यता उस संस्कृति और इस प्रजाति के इतिहास की अभिव्यक्ति व संरक्षण की चुनी हुई साधन हो गयी है। उनके लिए, भारत में पश्चिमी विज्ञान, प्रौद्योगिकी, उद्योग और ज्ञान व्यवस्था के विकास का उपयोग भौतिक समृद्धि प्राप्त करने के लिए और 'हिन्दुत्व सैन्यीकरण' करने हेतू बम, हथियार बनाने के लिए किया जाना है और 'सारी राजनीति का हिन्दूकरण' व 'हिन्दूवाद का सैन्यीकरण' करने की आवश्यकता है (सावरकर 1964 : 46, कीर 1966:142, cf राजू 1993 :1936-37)।

14.3.5 समानता की आलोचना

भारत सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रसार का अनुभव कर रहा है। अब यहाँ विविधता और बहुलता की तुलना में एकरूपता पर जोर हो रहा है। हालाँकि विद्वानों के एक भाग द्वारा यह व्यापक रूप से इंगित किया गया है कि भारत एक बहुल सांस्कृतिक, धार्मिक और भाषाई आधर पर निर्मित है; भारतीय राष्ट्रवाद एक बहुल सांस्कृतिक ढाँचे, राष्ट्रीयकृत विषय के रूप में लोगों के बीच अंतर-संबंद्धता और एक दूसरे के लिए न्याय, भाईचारा व समानता के लिए हमेशा खड़ा है। भारत में राष्ट्र को सभ्यतागत एकता, विश्वास और लोगों की सांस्कृतिक विरासत जो कि स्वीकृति और अस्वीकृति की स्वतंत्रता से पैदा हुई है के संदर्भ में समझा जाता है। इस प्रकार भारत में अनुष्ठानिक और धार्मिक रूढ़िवादिता के भीतर भी पाखण्डपूर्ण (नास्तिक) व्यवस्था विद्यमान है। यह एक गलत विश्वास है कि एक राष्ट्र की एकता के लिए समरूपता अनिवार्य है (एकांत, 2006:175)। वास्तव में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और नेहरू के धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद के दृष्टिकोण के बीच एक असहज तनाव बन गया है।

महत्वपूर्ण रूप से भारत आधुनिक औपनिवेशिक-पश्चात् राज्य निर्माण वंशावली में नागरिक और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के मध्य विरोधाभास को भी अनुभव कर रहा है। वे इतने उलझ गए है कि उन्हें एक दूसरे के साथ सुव्यवस्थित ढंग से सीमा निर्धारित करना असंभव है। इनमें से बहुत से विरोधाभासों के लिए माना जाता है कि ये देश में संवैधानिक नागरिकता के आदर्शों, जो एक ओर धर्मनिरपेक्ष व्यक्तिगत अधिकारों और दूसरी ओर उनके मौलिक समूह अधिकारों को पहचानते है, के अन्तर्गत हल किया जा सकता है। परम्परा, आदर्शों और पहचान के रूप में नागरिकता भारत में अभी भी उभर रही है, भले ही इसे राज्य के संवैधानिक ढाँचे के भीतर संस्थागत रूप दिया गया है फिर भी राष्ट्रीयता और नृजातीयता संबंधी प्रश्नों के साथ इसका संबंध है।

14.3.6 राज्य केन्द्रित और राज्य मुक्त राष्ट्रवाद

भारतीय राष्ट्रवाद का बहुल आधार बहुत-सी चुनौतियों का सामना करता है जैसा कि बहुत से पुराने सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक विरोधाभास हल करने के लिए है। इनमें से बहुत से विरोधाभास स्वायत्तता के दावे के साथ उप-राष्ट्रीयता के मुद्दे के रूप में प्रकट और पुनः प्रकट हो गए है। ओमान (2000) ने दो विरोधाभसी प्रवृत्तियों को देखा है। उनके अनुसार, स्वतंत्र भारत ने 'राज्य केन्द्रित राष्ट्रवाद' जो राज्य और राष्ट्र अंतर को भ्रमित करता है और संप्रभु राज्य को महत्वपूर्ण राष्ट्र निर्माता के रूप में मान्यता देता है; तथा 'राज्य मुक्त राष्ट्रवाद' जो संघीय राजनीति, अलग प्रांतों के लिए आंदोलन और पहचान चाहने वाले नृजातीय आंदोलनों के अंदर सांस्कृतिक और वित्तिय स्वायत्तता की माँगों द्वारा चित्रित है, को देखा है। उन्होंने यह भी पाया है कि जब 'नागरिक' अपनी मातृभूमि की तुलना में नृजातियों के अंदर अपनी सांस्कृतिक पहचान पर जोर देते है और अच्छे आर्थिक अधिकारों की माँग करते है तब अखिल-भारत एकल नागरिकता (सम्पूर्ण भारत में एक नागरिकता) और बहुल राष्ट्रीय पहचानों के बीच तनाव गहरा हो रहा होता है। (ओमान 2002:272)

बोध प्रश्न 2

1) भारतीय उपमहाद्विप में राष्ट्रवाद के आधारों की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

14.4 भारतीय राष्ट्रवाद के धर्मनिरपेक्ष पहलू और विरोधाभास

भारत में राष्ट्रीय पहचान के निर्माण की प्रक्रिया एक ओर पश्चिमीकरण उपनिवेशवाद, धर्मनिरपेक्षीकरण की ताकतों का तथा दूसरी ओर प्रचलित धार्मिक और सांस्कृतिक परम्पराओं का सामना करती है। भारत में मुख्यतः पारम्परिक/आदिकालीन सामाजिक और सांस्कृतिक आधार में धर्मनिरपेक्षता पश्चिमी प्रभाव के परिणामस्वरूप फैली है ना कि औपनिवेशिक प्रभाव के कारण। धर्मनिरपेक्ष भारत के आदर्श को पश्चिम से शिक्षा प्राप्त अभिजनों द्वारा प्रचारित किया गया था उन्होंने पश्चिमी विचारों से प्रेरणा प्राप्त की थी, धार्मिक सुधार आंदोलनों और उपनिवेशवाद-विरोधी संघर्ष से प्रोत्साहन मिला था। बहु-धार्मिक और सांस्कृतिक विविधताओं से अलग एक एकीकृत राष्ट्रीय पहचान का आदर्श धर्म और राष्ट्र राज्य के मध्य एक स्पष्ट संबंध चाहता है। मौलिक प्रश्न यह था कि राज्य और धर्म के मध्य सीमाबंदी होगी या नहीं, और क्या भारतीय राष्ट्रवाद बहुतसंख्यक हिन्दू राज्य पर आधारित होगा या यह धार्मिक बहुलवाद पर आधारित होगा। महात्मा गाँधी, भारत के राष्ट्र पिता ने लिखा थाः

'मुक्त भारत में कोई हिन्दू राज्य (शासन) नहीं होगा, यह भारतीय राज (शासन) होगा जो किसी धार्मिक संप्रदाय या समुदाय की अधिक संख्या पर आधारित नहीं होगा, बल्कि धर्म की विशिष्टता के बिना सभी लोगों के प्रतिनिधियों पर आधारित होगा.....। वे अपनी सेवा और योग्यता के रिकॉर्ड के लिए चुने जायेंगे। धर्म एक व्यक्तिगत मामला है, जिसका

राजनीति में कोई स्थान नहीं होना चाहिए' (गाँधी, एम.के. 1947:277-278)। उन्होंने आगे लिख : मैं अपने सपनों के भारत में एक धर्म का विकास नहीं चाहता हूँ, चाहे वह पूर्णतः हिन्दू या पूर्णतः ईसाई य पूर्णतः मुसलमान हो, बल्कि मैं एक दूसरे के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करने वाले अपने धर्मों के साथ, इसको पूर्णतः सहिष्णु चाहता हूँ (257).....। राज्य का इससे (धर्म) कोई लेना-देना नहीं है। राज्य को धर्मनिरपेक्ष कल्याण के बारे में देखना चाहिए, ना कि आपके और मेरे धर्म के बारे में। यह प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला है (278)। गाँधी ने स्वतंत्र भारत में धार्मिक विभाजन की नहीं बल्कि बहु-धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थाओं (सत्वों) के सह-अस्तित्व की वकालत की थी। उनका जोर ऐसे भारत के लिए था जो जनसमूहों और वर्गों के मध्य विभाजन से स्वतंत्र हो।

जवाहरलाल नेहरू के लिएः भारत जैसे एक देश में, जहाँ बहुत से विश्वास और धर्म है, वहाँ धर्मनिरपेक्षता के आधार को छोड़कर अन्य आधारों पर किसी वास्तविक राष्ट्रवाद का निर्माण नहीं किया जा सकता है...। हमें न केवल हमारे संविधान में घोषित आदर्शों पर चलना है, बल्कि उनको हमारी सोच और जीवन का एक हिस्सा बनाना है और इस प्रकार वास्तव में एक एकीकृत राष्ट्र का निर्माण होता है। इसका तात्पर्य धर्म की अनुपस्थिति नहीं है बल्कि धर्म को सामान्य राजनीतिक और सामाजिक जीवन से अलग धरातल पर रखना है। भारत में अन्य दूसरे दृष्टिकोण का तात्पर्य भारत का टूटना होगा (नेहरू 1983:330-331)

नेहरू ने भारत के संतों व महात्माओं की मजबूत आध्यात्मिक व नैतिक विरासत पर जोर दिया है जो हमेशा उन नैतिक अवधारणाओं को एक नैतिक आधार प्रदान करती है जो हमारे आदर्शों और हमारे जीवन को सामान्य रूप में एक साथ रखते हैं'' (नेहरू 1965 : 530-536)। एक धर्मनिरपेक्ष राज्य से नेहरू का ''वास्तविक अर्थ उस राज्य से नहीं है जहाँ धर्म हतोत्साहित है। इसका अर्थ है धर्म की स्वतंत्रता और अंतःकरण (विवेक) उनकी आजादी को भी सम्मिलित करता है जिनका कोई धर्म नहीं है, जो केवल एक दूसरे के साथ हस्तक्षेप नहीं करने के लिए या हमारे राज्य की मूल धारणाओं को मानने से संबंधित है .....। तथापि, मेरे लिए धर्मनिरपेक्ष शब्द कुछ ज्यादा प्रकट करता है, हालाँकि यह इसका शब्दकोष अर्थ नहीं हो सकता है। यह सामाजिक और राजनीतिक समानता के विचार को प्रकट करता है'' (नेहरू 1965:327)।

हालाँकि भारत में धर्मनिरपेक्षता का सार पश्चिम के प्रभाव के अंतर्गत् फैला है, फिर भी पश्चिम और भारत के मध्य इसकी उत्पत्ति का संदर्भ स्पष्ट रूप से अलग था। पश्चिम में धार्मिक सुधार, औद्योगिकरण और लोकतांत्रिक क्रान्ति के प्रोत्साहन के तहत राज्य धर्म से अलग हो गया था जैसा कि वहाँ राज्य और धर्म के मध्य सीधा टकराव था। जबकि भारतीय धर्मनिरपेक्षता पश्चिम की तरह धर्म के साथ सीधे टकराव के साथ नहीं बढ़ी है। बल्कि यह एक ओर एक एकीकृत अवधारणा धर्मों को ऊँचा उठाने के रूप में विकसित हुई है तथा दूसरी ओर इसने स्वयं भारतीय धर्मों के भीतर धर्म निरपेक्षीकरण प्रक्रिया के द्वारा एकीकृत शक्तियों के दोहन को बढ़ावा दिया है। वास्तव में, भारतीय धर्मनिरपेक्षता एक बहु-धार्मिक देश में समानता की धर्मनिरपेक्ष अवधारणा के द्वारा विभिन्न धर्मों के मध्य एक सेतू की तरह काम करती है (जोशी, 2007)। धर्मनिरपेक्षता के कई सांस्कृतिक तत्वों की भारतीय ऐतिहासिक परम्परा के कुछ पहलुओं में गहरी जड़े हैं

समकालीन भारत में धार्मिक कट्टरता और संप्रदाय के पुनरूत्थान की होड़ में एक ओर धार्मिक बहुलवाद और सहिष्णुता की ऐतिहासिक परम्परा की प्रधानता है, दूसरी ओर मदान (1997) उस धर्मनिरपेक्षता को दर्शाते है जो भारत में पृथक्करण का प्रचार करता है और

पवित्र अपनी धार्मिक परम्परा के साथ अकेला खड़ा है। धर्मनिरपेक्षता की पश्चिमी विचारधारा और परम्परा भारत के समुदायों और सामाजिक समूहों के विश्वासों और परम्पराओं के विपरीत है। मदान के अनुसार, संत परम्परा के विभिन्न धार्मिक आंदोलन कट्टरता की प्रवृति के विरूद्ध सहिष्णुता और शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए हमेशा प्रचार करते है। मदान (2006) इसके बाद ये सहभागी बहुलवाद के लिए प्रचार करते है जो दूसरे समूहों की अनुपस्थिति में एक सामाजिक समूह की अपूर्णता को पहचानता है।

भारत में कुछ आर्थिक, सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक विरोधाभासों के कारण धर्मनिरपेक्ष और मौलिक, व्यक्तिगत और सामूहिक पहचानों के बीच कभी-कभी कठोर वर्गीकरण जगह ले लेता है। इनसे धर्मनिरपेक्ष और मौलिक पहचानों का बार-बार अतिक्रमण होता है जो भारत में नृजातीयता, राष्ट्रीयता और नागरिकता की पहचानों के मध्य अन्तरानुयोगिता में परिलक्षित होते हैं।

ना तो जन समूहों और वर्गों के मध्य अंतर के उन्मूलन के लिए राष्ट्रपिता के सपने को, और ना ही नेहरू के सामाजिक और राजनीतिक समानता के विचार को उनके सही संदर्भ में समझा गया है। सार रूप में गरीबी, बेरोजगारी और आजीविका असुरक्षा का उन्मूलन एक दूर का सपना बन कर रह गया है; उचित शिक्षा व प्रशिक्षण और विज्ञान व तार्किकता की भावना अभी तक प्रत्येक घर के दरवाजे तक नहीं पहुँचाया जा सका है, सामंतवादी प्रभुत्व और जातीय, भाषाई, क्षेत्रीय, प्रजातीय व लिंग उत्पीड़न और भेदभाव का अभ्यास (प्रथा) जनसंख्या के सबसे बड़े भाग के लिए जीवन की वास्तविकता बने हुए है। इन साथ में समाज में बड़े विभाजन है जहाँ संसाधनों, शक्ति, आय, सूचना और सामाजिक प्रस्थिति के ऊपर केवल कुछ सीमित लोग ही असाधारण (बहुत अधिक) नियंत्रण रखे है और बहुत बड़ी संख्या समाज में हाशिए और मूल्यवान वस्तुओं की तरह उभरी है। राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया बहुत प्रकार से भारत एक खण्डित छवि को चित्रित करती है। इस प्रकार ऐतिहासिक परम्परा बहुलवाद और मौलिक पहचानों के अस्तित्व को प्रस्तुत करती है जबकि समकालीन समाज में सामाजिक व आर्थिक वंचना और असमानता ने मौलिक सामूहिक पहचानों के साथ जुड़ाव पा लिया है। महत्वपूर्ण रूप से मौलिक पहचानों ने लोगों और राजनेताओं दोनों के लिए राजनीतिक अर्थ प्राप्त कर लिया है हालाँकि अंतरंगता और उद्देश्य विविध है।

इस प्रकार सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की पश्चिमी अवधारणा युग्मों के संदर्भ में भारत में राष्ट्रवाद की व्याख्या करने में अपर्याप्त प्रतीत होता है। भारत में सांस्कृतिक और नागरिक राष्ट्रवाद के मध्य मिश्रण की मात्रा एक वास्तविकता बनी हुई है। बहुत बार दोनों के मध्य अंतर करना मुश्किल होता है क्योंकि मौलिकवादी और नृजातीयता नागरिक प्रथाओं की किस्मों के साथ गहराई से जुड़े हुए है। छोटे या स्थानीय स्तर के सांस्कृतिक/नृजातीय अंतर देश की अनिवार्यताओं और बड़ी घटनाओं के दौरान निष्प्रभावी (फीके) हो जाते है। ऐसा अंग्रेजों के विरूद्ध स्वतंत्रता संग्राम 1947-48, 1965, 1971, 1999 में भारत-पाकिस्तान युद्धों, 1962 में भारत-चीन युद्ध, 2002 में कारगिल युद्ध, आदि के दौरान अच्छी तरह चित्रित हुआ है। क्रिकेट, फुटबॉल और हॉकी जैसे मुकाबलों, कॉमनवेल्थ, ओलम्पिक, एशियन, सार्क आदि जैसे खेलों के साथ खेल कार्यक्रमों के दौरान ऐसी एकता का निर्माण किया जाता है। इस तरह की राष्ट्रीय पहचान सुदृढ़ीकरण और सामूहिक अभिव्यक्ति के ऊपर व नीचे जाते झूले में झूल रही है क्योंकि ये या तो बाहरी आक्रमणों की राजनीतिक अनिवार्यता के दौरान व्यक्त किए जाते है या फिर खेल कूद आदि के माध्यम से सामूहिक भावना के सुदृढ़ीकरण के दौरान व्यक्त होते है। राष्ट्रवाद पर प्रतिदिन के संभाषण (विमर्श) में देश (पैतृक भूमि) के प्रति

प्रेम युग्मकों (विरोधों) को समाप्त कर देता है और एक अभिज्ञात (पहचाने हुए) 'अन्य' के बिना विविधताओं की सभी किस्मों को एक साथ समायोजित करता है। इस प्रकार का संभाषण (विमर्श) लोकतांत्रिक परम्परा के भाग के रूप में व्यक्तिगत और सामूहिक अधिकारों के दावे को भी समायोजित करता है। देश के लिए परम्परागत प्रेम के व्यापक ढाँचा ऐतिहासिक रूप से सभी बाहरी व्यक्तियों, जो आक्रमणकारियों के रूप में भी भारत आये थे, का भारतीयकरण कर देता है। राष्ट्रवाद, नागरिक और सांस्कृतिक, की भावना जिसने भारत में पश्चिमी विचारधारा के भागों के रूप में प्रवेश किया है, बहुआयामी बनी रही है और अभी तक इनमें से किसी भी रूप में निर्धारित नहीं किया गया है जैसा कि यह बार-बार एक छोर के सांस्कृतिक चरित्र से दूसरे छोर के नागरिक चरित्र तक एक पेंडुलम की तरह स्थानांतरित होने के लिए बनाया गया है। नागरिकता के धर्मनिरपेक्ष महत्व के रूप में जारी यह स्थानांतरण अस्थिर बना हुआ है और हालाँकि नृजातीयता को अप्रत्यक्ष रूप से बाकी लोगों से अधिक विशेषाधिकार प्राप्त होता है।

14.5 विविध पूरकताओं के साथ सह-अस्तित्व

भारत में नृजातीयता, राष्ट्रीयता और नागरिकता के मध्य अंतरापृष्ठ (संबंध के आखिरी विश्लेषण को एक समरूप कठोर एकीकृत ढाँचे में नहीं समझने की आवश्यकता है बल्कि बहु-सांस्कृतिकवाद और धार्मिक बहुलवाद के लचीले आधार के संदर्भ में समझने की है। इस प्रकार का लचीलापन मैत्री-संबंधी हस्तक्षेप की वास्तविकताओं के बावजूद विविध पूरकताओं के साथ इन श्रेणियों को सह-अस्तित्व के लिए स्थान प्रदान करता है।

यह दिखाता है कि यद्यपि भारत मुख्यतः एक पारम्परिक और आध्यात्मिक देश है, इसे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए शायद ही कभी इसके पारम्परिक आध्यात्मिक लोकाचार को आंतरिक (अपनाना) किया जाता है। चार महान धर्मों हिन्दू धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म, सिख धर्म और असंख्य पैतृक जनजातीय धर्मों की मातृभूमि तथा दूसरे मुख्य धर्मों जैसे इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म, पारसी धर्म और समृद्ध संत परंपरा के अच्छे मेजबान के रूप में भारत ऐतिहासिक रूप से एक पूर्ण समरूप पहचान की तुलना में आध्यात्मिक और सांस्कृतिक समायोजन पर आधारित है। हिन्दू धर्म जो देश में बहुत बड़ी जनसंख्या द्वारा अपनाया गया है मुख्य रूप से बहु-सांस्कृतिकवाद के समायोजन के लिए जीवन के उदार तरीके के रूप में उपयोग किया जाता है उसके बाद हठधर्मिता का आवरण चढ़ाये सांप्रदायिकता की अभिव्यक्ति है।

हालाँकि नृजातीयता नागरिकता और राष्ट्रीयता पर लगातार अपनी छाप छोड़ रही है, और यह शब्द के पश्चिमी संदर्भ में धर्मनिरपेक्ष नागरिकता और नागरिक राष्ट्रवाद की उत्पत्ति के लिए अवरोध बना हुआ है, हर वास्तविकता में उन्हें सांस्कृतिक रूप से अलग करना मुश्किल हो गया है। वास्तव में, धर्मनिरपेक्षता का पश्चिमी दृष्टिकोण अभी भी भारतीय समाज में सांस्कृतिक सुदृढ़ता नहीं प्राप्त कर पाया है। जैसा कि जोशी (2007) ने इंगित किया है कि 'समसामायिक भारतीय धर्मनिरपेक्षता की कुछ बुनियादी विफलताएँ भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं में सुदृढ़ता की कमी के कारण उत्पन्न हुई है जो, एक बड़े संदर्भ में, अभी भी भारतीय धार्मिक परम्पराएँ मानी जाती है। इस बात को अनदेखा करना कि भारतीय धर्म और भारतीय सांस्कृतिक परम्पराएँ घनिष्ट रूप से जुड़े हुए है, आधारभूत ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय तथ्यों और प्रक्रियाओं की उपेक्षा करना है।' मदान (1997) भी दर्शाते है कि धर्मनिरपेक्षता की पश्चिमी विचारधारा और परम्परा भारत में समुदायों और सामाजिक समूहों के विश्वासों और परम्पराओं के विपरीत है। फिर से यह स्पष्ट करना आवश्यक है

कि पारम्परिक विश्वासों और सांस्कृतिक प्रथाओं को सांप्रदायिकता और कट्टरवाद की परम्पराओं के संदर्भ में नहीं समझा जाना चाहिए। इस प्रकार मदान (1997) भारत में संत परम्परा के महत्व को उजागर करते है जिसको कट्टरवाद की प्रवृत्ति के विरूद्ध सहिष्णुता और शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए हमेशा प्रचारित किया गया है।

जैसा कि इन पृष्ठभूमियों में भारत में एक राष्ट्र का विचार केवल एक धर्म, एक भूमि, एक भूगोल और भाषा पर आधारित है और समाज के बहुल आधारों, जो अनिवार्य रूप से बहु-भाषाई, बहु-नृजातीय और बहु-सांस्कृतिक है, की उपेक्षा की गयी है। हालाँकि स्वतंत्रता संग्राम के दौरान इस प्रकार इस प्रकार की विविधता के महत्व को उपेक्षित किया गया था जबकि अनिवार्यता और राष्ट्रवाद के प्रति प्रतिक्रिया स्वतंत्रता संग्राम और इसके बाद दोनों के दौरान एक सामान्यीकरण परियोजना बन गयी, इसने सामान्य सांस्कृतिक ढाँचे पर जोर नहीं दिया गया। स्वतंत्रता पश्चात् भारत की सामान्यीकरण परियोजना ने समानता, भाईचारा और न्याय के लिए प्रचार किया तथा मौलिक व बहु-नृजातीय वास्तविकताएँ, जो जमीनी स्तर पर पर सुदृढ़ है, के महत्व को कम करके संवैधानिक व प्रगतिशील विधायी उपाय जो सभी वर्गों के लोगों के लिए अच्छे है, के द्वारा धर्मनिरपेक्षता समाजवाद और लोकतांत्रिक गणतंत्र के लिए जोर लगाया। सांप्रदायिक मौलिक अभिविन्यास और नृजातीय संबद्धता मुख्यतः सामान्य आदमी की क्षमता, चयन और ऊर्ध्वगामी (ऊपर की ओर) गतिशीलता की कमी के कारण राजनीतिक हेरफेर के लिए व्यापक रूप से उपलब्ध है। भारत में कृषकों, किसानों, वनवासियों, विस्थापित लोगों आदि के प्रदर्शनों और विद्रोहों के साथ-साथ नृजातीय/मौलिक पहचानों पर आधारित सामूहिक अभिकथन भी मुखरित और रचे हुए है। नृजातीय और अन्य स्थानीय उत्थान हालाँकि न केवल संदेह के साथ देखे जाते हैं बल्कि कई बार राज्य और विरोधियों द्वारा 'अन्य' के रूप में नामित किये जाते है। वास्तव में, प्रभावी रूप से गरीबी के कारणों पर ना कि इसके लक्षणों पर हमला करके गरीबी, अभाव और गैर-एकीकरण के नृजातीयकरण को मिटाने की आवश्यकता है। यह नृजातीयता के सर्वनाश का सुझाव नहीं है बल्कि प्रत्येक नृजातीय समूह को विकास के लिए समान अवसर देकर इसको समृद्ध भारतीय परम्परा के भाग के रूप में संरक्षित करना होगा ताकि प्रत्येक सामाजिक समूह की मौलिक भावना पोषित और संरक्षित हो।

आमतौर पर भारत राष्ट्रवादियों के एक राज्य के बजाय देशभक्तों का एक देश है। जैसा कि नन्दी (2006) ने व्याख्या की है कि हालाँकि राष्ट्रवाद अभी भी विकसित हो रहा है, एक बड़े भाग के लिए यह लोकाचार, सांस्कृतिक और देशभक्ति की घटना है जबकि बचे हुए गैर-विशिष्ट, गैर-वैचारिक समुदायों के अस्तित्व को देश के अलावा धर्मों, जातियों, संप्रदायों, भाषाई संबद्धता और नृजातीयता पर आधारित मानते है। इस प्रकार की घटना राज्य से उम्मीद करती है कि राज्य एक समाज और एक संस्कृति की आवश्यकताओं को पूरा करे, ना कि संस्कृति और समाज राज्य ???? की (नन्दी, 2006)। वास्तव में प्रतिदिन अस्तित्व में भारत देशभक्त नागरिकों की असंख्य अंतःक्रियाओं का अनुभव करता है। उनका देश के साथ जुड़ाव गैर-वैचारिक है; उनके दृष्टिकोण का निर्माण/विकास 'दूसरों' के प्रति शत्रुता को ध्यान में न रखकर हुआ है, उनका प्यार उनके स्थानीय समुदाय और आधुनिक समाज से पहले से विद्यमान संस्कृति के लिए किसान, कृषक, मजदूर, शिल्पकार के रूप में विभिन्न नृजातीय समूहों के सदस्य के रूप में है। उनकी देशभक्ति भारत में एक बहुल समाज और संस्कृति का आधार और उसमें एक बहु-राष्ट्रीय/बहु-नृजातीय समाज का आधार प्रदान करती है। इस प्रकार मानने के लिए यह एक असंगत दावा होगा कि राष्ट्रवाद आधुनिक भारत में एक सामान्य अधिपत्य/नायकत्व निर्माण के रूप में पहले से विद्यमान है।

एरिक होब्सबौम (1990) के लिए राष्ट्रवाद सांस्कृतिक लोकगीत से राष्ट्रीय विचार और बाद में जनसमूह आधारित राष्ट्रीय आंदोलन की तरह विकसित हुआ है। उसके लिए राष्ट्रीय आंदोलन के कालक्रम में राष्ट्रवाद एक राष्ट्रीय राज्य के निर्माण से पहले घटित होता है; संभवतः इस निर्माण के परिणामस्वरूप, शायद बहुत बार राष्ट्रवाद बाद में होता है। उसके लिए तीसरी दुनिया में, राष्ट्र राज्य के गठन के बाद भी राष्ट्रवाद आकार नहीं लेता है (होब्सबौम :1990)। वह राजनीतिक/सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के निर्माण से संबंधित है। हालाँकि राजनीतिक राष्ट्रवाद भारत के लिए एक पश्चिमी आयत (आया हुआ) है और इसने ब्रिटिशों के खिलाफ स्वतंत्रता संग्राम के दौरान धीरे-धीरे आकार लिया, जबकि नागरिक राष्ट्रवाद देशभक्ति के प्रतिबिम्ब के रूप में भारतीय समाज की महान परम्परा का एक भाग था जिसने लोगों को कई सांस्कृतिक सूत्रों से जोड़ा था। हालाँकि देश के अधिकतर नागरिक नागरिक राष्ट्रवाद के तत्वों को रखने वाले है, समकालीन भारत में राजनीतिक राष्ट्रवाद एक विचारधारा के रूप में अधिकांष नागरिकों में विरल (कम) उपस्थिति रखता है। इस प्रकार नन्दी ने महसूस किया इस स्तर पर राष्ट्रवाद एक व्यवहार्य (साध्य) वैचारिक ईकाई है, खासतौर पर शहरी, शिक्षित, आधुनिक नागरिकों के छोटे अल्पसंख्यकों में जिसमें जीवन के पुराने तरीकों के सिद्धांत अस्थिर हो गए हैं (नंदी 2006)।

समकालीन भारत नागरिक और राजनीतिक/सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के मध्य विचारों के टकराव का गवाह है। नागरिक राष्ट्रवाद मुख्य रूप से विविध नृजातीय स्रोतों के लोगों के मध्य एकता, सहानुभूति और भाईचारे को बढ़ाने के लिए और समाज के बहुल आधारों की विरासत और महिमा को संरक्षित करने की एक प्रक्रिया बना हुआ है जबकि राजनीतिक राष्ट्रवाद समरूपता और सामान्यता पर जोर देता है। भीतर से 'अन्य' की पहचान करके और नैतिकता व मानवीय दायित्वों की कीमत पर भी एक अपरिहार्य समरूपीकरण (एक जैसा बनाने की प्रक्रिया) को थोपकर इस समाज में बिखण्डन की भावना लाकर कई मायनों में आधिपत्य (नायकत्व) सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से समाज के बहुल आधार को खतरा है। इसने आदमी को आदमी का शत्रु बना दिया है। हाल ही में चर्चों पर हुए हमले, कथित गोमांस खाने के लिए मुस्लिमों पर हमला, घर वापसी और लव जेहाद आदि भीतर से ऐसे 'अन्य' के निर्माण के केवल कुछ संकेत है। ये घटनाएँ केवल टैगोर (1955) की आशंका को सच सिद्ध करती है कि 'राष्ट्रवाद एक महान खतरा है और राष्ट्र मानवता के लिए सबसे बड़ी बुराई है।''

जैसा रेनन (1882) ने सोचा है कि यदि एक राष्ट्र को यादों की समृद्ध विरासत पर आधारित एकात्मकता और अध्यात्मिक सिद्धान्त वाला राष्ट्र होना है, या जैसा एंडरसन (1983) ने प्रचारित किया है कि यदि अपनी समन्वय की छवि के साथ एक काल्पनिक समुदाय बनना है या फिर जैसा गेल्नर (1983) ने कहा है कि यदि यह सांझी संस्कृति के साथ अवैयक्तिक समाज को स्थापित करने का एक प्रयास है या जैसा ग्रीनफील्ड (1993) और इगनटेफ (1993) द्वारा व्याख्या की गई है कि एक अच्छा राष्ट्रवाद हो, तो भारतीय समाज के बहु-सांस्कृतिक, बहु-नृजातीय, बहु-धार्मिक आधार को संरक्षित किया जाना है। सह-अस्तित्व की अच्छी विरासत और यादें, सामाजिक समूहों के मध्य समन्वय का निर्माण, सांझा करने और देने व लेने की लम्बी परम्परा भारतीय राष्ट्रवाद को आधार प्रदान करती है और भीतर से भी काल्पनिक 'अन्य' की घोषणा नहीं करती। जैसा कि गाँधी ने लिखा हैः यहाँ पर नृजातीय घृणा के लिए जगह नहीं है। ऐसा हमारा राष्ट्रवाद हो (गाँधी, 1947)।

हालाँकि सभी के लिए उपलब्ध पहचान की अभिव्यक्ति के रूप में राष्ट्रीयता, नागरिकता और नृजातीयता को उनके प्रतिदिन के जीवन में भावनात्मक अभिव्यक्ति के रूप की तुलना में

लोग इन्हें अधिक व्यवहारिक रूप से उपयोग करते है। एक बहु-सांस्कृतिक और बहु-नृजातीय समाज में नृजातीयता, राष्ट्रीयता और नागरिकता की पहचानों के मध्य संबंध स्वभाविक है। समाज में तेज आर्थिक, सामाजिक और जनसंख्यात्मक बदलाव, क्षेत्रीय नृजातीयता और उप-राष्ट्रीय आंदोलनों के प्रसार और दक्षिणपंथी राष्ट्रवाद के पुनरूत्थान के मद्देनजर इन संबंधों ने समकालीन भारत में जटिलताएँ प्राप्त कर ली है। भारत के सामान्य आदमी की पहचान का आधार जो व्यापक रूप से आध्यात्मिकता, जीववाद, प्राचीनता (मौलिकता) की असंख्य लोकगीत परंपरा में अवस्थित है वह भारत में भाईचारे, समानता और धर्मनिरपेक्ष नागरिकता के संवैधानिक आधार के अंदर पोशण के लिए एक स्थान भी पाता है। भारत के संविधान ने लोगों को धर्मनिरपेक्ष नागरिकता, समानता, न्याय और विकास के लिए सशक्त बनाया है, और साथ ही साथ विविध भाषाई, धार्मिक और सांस्कृतिक परम्पराओं के संरक्षण और प्रोत्साहन के लिए वादा किया है। अभी तक के प्रयास अधिपत्य (नायकत्व) सांस्कृतिक आत्मसातकरण को सभी समूहों पर न थोपनों और समानता को सुनिश्चित करके, सभी के लिए कानून और न्याय का शासन और सभी सांस्कृतिक और धार्मिक समूहों के लिए समान सम्मान द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र में नागरिक संस्कृति का बढ़ावा देने के लिए किए गए है। सार्वजनिक विमर्श में धार्मिक और मौलिक के बीच वर्गीकरण और साथ ही साथ भारत की ऐतिहासिक विविधताओं और वास्तविकताओं के भाग के रूप में सभी सांस्कृतिक और नृजातीय समूहों के समायोजन और सम्मान तथा समान उपचार देने की एक प्रक्रिया द्वारा धर्मनिरपेक्ष नागरिकता और नागरिक राष्ट्रवाद की एक संस्कृति को अंतनिविश्ट करने (चिन्त में बैठाने) के लिए नीचे के लोगों की पहल के साथ भी प्रयास किया गया है। हालाँकि चुनौतियाँ बनी हुई है कि कैसे इस वर्गीकरण, पूरकताओं और समायोजन की संस्कृति को समकालीन भारत में कायम रखा जाये। सभी संभावनाओं में जबाव नागरिकता अधिकारों के समावेशन और वादों के साथ निहित है।

बोध प्रश्न 3

1) भारतीय राष्ट्रवाद के धर्मनिरपेक्ष पहलूओं और इसकी चुनौतियों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय राष्ट्रवाद में विविध पूरकताओं के साथ सह-अस्तित्व की गतिशीलता का पता लगाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

14.6 सारांश

इस इकाई में हमने भारतीय राष्ट्रवाद के महत्वपूर्ण पहलूओं को नृजातीयता और दूसरी मौलिक पहचानों के साथ इसके संबंध के द्वारा वर्णित किया है। हमने आपका राष्ट्रवाद की प्रमुख अवधारणाओं से भी परिचित करवाया है। इस इकाई में विस्तार के साथ राष्ट्रवाद न्याय के लिए सार्वजनिक संघर्ष के रूप में, राष्ट्रवाद की एक बुराई के रूप में अनुभूति, भारतीय समाज को विरासत में मिली स्वदेशी सामान्यता के उत्पाद के रूप में राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और अंतर के सामान्यीकरण के लिए एक परियोजना के रूप में राष्ट्रवाद पर बहस जैसी अवधारणाओं को प्रस्तुत किया गया है। इस इकाई में सामान्यता की विरासत के संदर्भ में भारतीय राष्ट्रवाद के दृष्टिकोण की आलोचना; राज्य केन्द्रित और राज्य मुक्त राष्ट्रवाद के पहलूओं, राष्ट्रवाद के धर्मनिरपेक्ष पहलूओं और इसके विरोधाभासों तथा भारतीय समाज में राष्ट्रवाद में विविध पूरकताओं के साथ सह-अस्तित्व की वास्तविकताओं का वर्णन किया गया है।

14.7 संदर्भ ग्रंथ

Banerjee, S. 2002 'Civil and Cultural Nationalism in India', in Brass, P and Vanaik A. (eds) *Competing Nationalism in South Asia: Essays for Asghar Ali Engineer*. Orient Longman: New Delhi.

Bhargava, R. 1998. *Secularism and its Critics*. Oxford University Press: New Delhi.

Chatterjee, P. 1994. *The Nation and its Fragments: Colonial and Postcolonial Histories*. Oxford University Press: Delhi.

Encyclopedia Britannica 1985: Ethnic Group University of Chicago press: Chicago. Vol 4

Ernest Renan, "What is a Nation", text of a conference delivered at the Sorbonne on March 11th, 1882, in *Ernest Renan, Qu'est-ce qu'une nation*?, Paris, Presses-Pocket, 1992. (translated by Ethan Rundell).

Gandhi, M.K. 1947. *India of My Dreams*, compiled by R.K. Prabhu, Navajivan Publishing House, Ahmedabad, 1947.

Gandhi, M.K. 1967. *Political and National Life and Affairs*, Vol II, compiled by V.B. Kher, Navajivan Publishing House, Ahmedabad, 1967.

Glazer, Nathan and Moynihan Daniel P. (eds) 1975. *Ethnicity: Theory and Experience. Cambridge*. Harvard University Press.

Hobsbawm, E.J. 1990. *Nation and Nationalism Since 1780*. Cambridge University Press: Cambridge.

Khilnani, S. 1997. *The Idea of India*. Hamish Hamilton: London

Madan, T.N. 2006. *Images of the World, Essay on Religion, Secularism and Culture*. Oxford University Press: New Delhi

Mill, JS, 1861/1958. *Consideration of Representative Government. Liberal Arts*. New Work, Op cit. Rustow, D. Interenational Encyclopedia of Social Sciences???

Nandy, A. 2006, Nationalism, Genuine and Spurious: Mourning Two Early Post-Nationalist Strains, *Economic and Political Weekly*, Vol. 41, No. 32: 3500-3504.

Nehru, J, 1955. *An Autobiography*. The Bodley Head, London.

Oommen, T.K. Demystifying the Nation and Nationalism. *India International Quarterly* VoL. 29.No. 4.Pp 259-274

Smith A.D. 1991.*National Identity*. Penguin: Harmondsworth

Smith, A. 1995. Nations and Nationalism in Global Era. Polity Press: Cambridge

Smith, Anthony D. 1971: Theories of Nationalism (first edition). London: Duckworth.

Spencer, P. and Wollman, H. 1998. 'Good and bad Nationalisms: A Critique of Dualism' *Journal of Political Ideologies* Vol. 3. No3: 255-274 2

Stone, J. and Piya, B. 2007.'Ethnic Group' in Ritzer, G. (ed) *Blackwell Encyclopedia of Sociology*, vol. 111. Blackwell: Oxford.

Tagore, R. 1958. *Nationalism*. Macmillan V.D. Savarkar. *Hindutva: Who is a Hindu*? (1923; rpnt. New Delhi: Bharatiya Sahitya Sadan, 1989), pp. 4–12, 42–6, 90–2, 113–15.

कुछ उपयोगी पुस्तकें

Beteille, A 1999. "Citizen, State and Civil Society '*Economic and Political Weekly*, vol No. PP 2588 – 2591.

Brass, R. P. and Vanaik, A (eds), 2002, *Competing Nationalisms in South Asia: Essays for Asghar Ali Engineer*. Orient Longman: New Delhi.

Desai A.R, 1976. *Social Background of Indian Nationalism*. Popular Prakashan ; Bombay

Hobsbawm, E.J. 1990. *Nation and Nationalism Since 1780*. Cambridge University Press: Cambridge.

Madan, T.N. 2006. *Images of the World, Essay on Religion, Secularism and Culture*. Oxford University Press: New Delhi

SinghaRoy D.K. 2017 Indentity Society and Transformative Social Categories. Sage Publication New Delhi.

शब्दावली

राष्ट्र लोगों का एक समूह जो राजनीतिक और सांस्कृतिक सामान्यता के आधार पर स्वयं को पहचानता है।

राष्ट्र निर्माण राष्ट्रीय पहचान के विकास की प्रक्रिया

राष्ट्रवाद राष्ट्रवाद (व्यक्तियों) या समूहों की भावना है कि वे राष्ट्र के सदस्य है। यह राष्ट्र के प्रति अपनेपन की भावना या निष्ठा का भाव है जो उसके जन्म या किसी निश्चित राष्ट्र का सदस्य होने के कारण आती है।

राज्य

एक राजनीतिक संघ (संगठन) जो प्रादेशिक क्षेत्राधिकार, अहिंसात्मक सदस्यता, सदस्यों के वर्णन करने योग्य अधिकारों और कर्त्तव्यों तथा शक्ति के वैध प्रयोग पर एकाधिकार जैसी विशेषताओं के द्वारा चिह्नित है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

QR Code -website ignou.ac.in

QR Code -e Content-App

QR Code - IGNOU-Facebook
(@OfficialPageIGNOU)

QR Code Twitter Handel
(OfficialIGNOU)

INSTAGRAM
(Official Page IGNOU)

QR Code -e Gyankosh-site

IGNOU SOCIAL MEDIA

QR Code generated for quick access by Students

IGNOU website

eGyankosh

e-Content APP

Facebook (@offical Page IGNOU)

Twitter (@ Offical IGNOU)

Instagram (official page ignou)

Like us, follow-us on the University Facebook Page, Twitter Handle and Instagram

To get regular updates on Placement Drives, Admissions, Examinations etc.

MPDD/IGNOU/-P.O. 4.5K /OCTOBER 2020

ISBN: 978-93-90496-30-3